Chapter-5

पंचम अध्याय

वाक्य-विचार

प्रास्ताविक

भाषा में ध्वनि, शब्द और रूप के बाद जो भाषाई इकाई आती है उसे हम वाक्य कहते हैं। वाक्य में कोई एक भाव, विचार या क्रिया व्यक्त होती है। वैसे तो वाक्य में कर्ता, कर्म, क्रिया, विशेषण, सर्वनाम, कारक, प्रत्यय आदि कई व्याकरणिक पद आते हैं, परन्तु वाक्य में जिसका सर्वोपरि स्थान है वह तो है क्रिया। क्रिया के बिना वाक्य का अस्तित्व ही नहीं है। जो स्थान मानव-देह में प्राण या आत्मा का है लगभग वही स्थान वाक्य में क्रिया का है। वाक्य एक शब्द से लेकर अनेक शब्दों की समष्टि से बनता है, परन्तु यदि वाक्य एक ही शब्द का होगा तो उसमें व्याकरण के और रूप चाहे आएं न आएं क्रिया-रूप तो अवश्य आता ही है, यथा - चलो, कहो, बोलो, करो इत्यादि। इस प्रकार सन्दर्भ-सापेक्ष वाक्यों में कई बार केवल 'हाँ' या 'ना' हो तो भी उसे वाक्य कहा जाता है। अब यहाँ पर किसी को प्रश्न हो सकता है कि 'हाँ' या 'ना' में कहाँ क्रिया-रूप आता है? परन्तु यहाँ इस बात का ध्यान रहे कि ऐसा सन्दर्भ सापेक्ष वाक्यों में होता है और उसके पूर्व सदन्र्भ में क्रिया-रूप की उपस्थिति अवश्य होती है। जैसे यदि कोई पूछता है कि क्या आप खाना खाओगे? और उसके उत्तर में यदि कोई 'हाँ' या 'ना' कहता है तो उसका 'हाँ' या 'ना' कहता है तो उसका 'हाँ' या 'ना' कहना खाने की क्रिया के सन्दर्भ में ही है। 'हाँ' या 'ना' के बाद के शब्दों में जो अध्याहार है उसकी यदि पूर्ति हो जाए तो उसमें क्रिया-रूप की उपस्थिति अवश्य दृष्टिगत होगी। प्रस्तुत अध्याय में हमने वाक्य को केन्द्र में रखकर डॉ. मिश्र की औपन्यासिक भाषा पर विचार किया है। वाक्य के साथ यहाँ वाक्य-खण्डों को भी लिया गया है। जैसे मुहावरे को हम सम्पूर्ण वाक्य नहीं कह सकते परन्तु वह वाक्य-खण्ड होता है। हमने प्रस्तुत अध्याय में वाक्य-खण्डों को भी अपने अध्ययन का विषय बनाया है।

वाक्य की परिभाषा

वाक्य की तात्विक परिभाषा अत्यन्त विवादस्पद विषय है और प्राचीन वैयाकरणों, नैयाकरणों, साहित्यकारों तथा समीक्षकों ने वाक्य को अलग-अलग तरह से परिभाषित किया है, जिनमें कुछेक की परिभाषाओं का उल्लेख करना हम आवश्यक समझते हैं-

01. प्राचीन वैयाकरणों में सर्वप्रथम महर्षि पतंजलि आते हैं जिन्होंने वाक्य को परिभाषित करते हुए कहा है - "कारक, अव्यय, विशेषण, क्रिया-विशेषण

तथा क्रिया के एक साथ प्रयोग को या मात्र क्रियापद के प्रयोग को या कभी-कभी क्रियापद रहित एक मात्र तपणम् या पिण्डीम् जैसे संज्ञापद को भी वाक्य मानते हैं।''[1]

02. आचार्य विश्वनाथ ने 'वाक्यं स्यात् योग्यताकांक्षा सत्तियुक्तिः पदोच्चयः' कहा है; अर्थात् आकांक्षा, योग्यता और आसत्ति युक्त पदों का समूह वाक्य कहलाता है।[2]

03. डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा हिन्दी के उच्च कोटि के समीक्षक और विद्वान तो हैं ही, एक भाषाविद् के रूप में भी उनकी पहचान है। उन्होंने वाक्य की परिभाषा इस प्रकार दी है - ''भाषा की न्यूनतम पूर्ण सार्थक इकाई वाक्य ही है।''[3]

04. उक्त सभी परिभाषों के आधार पर डॉ. भोलानाथ तिवारी ने वाक्य को इस प्रकार परिभाषित किया है - ''वाक्य भाषा की वह सहज इकाई है जिसमें एक या अधिक शब्द होते हैं तथा जो अर्थ की दृष्टि से पूर्ण हो या अपूर्ण, व्याकरणिक दृष्टि से अपने विशिष्ट सन्दर्भ में अवश्य पूर्ण होती है, साथ ही उसमें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कम से कम एक क्रिया का भाव अवश्य होता है।''[4]

वाक्य की आवश्यकताएँ

वाक्य की आवश्यकताओं में वाक्य के साधक एवं आवश्यक तत्वों को समाविष्ट किया जाता है। भाषा वैज्ञानिकों के मतानुसार वाक्य की मुख्य आवश्यकताएँ पाँच हैं - आकांक्षा, योग्यता, सार्थकता, आसत्ति और अन्विति।

01. आकांक्षा : वाक्य सुनकर भाव या विचार पूरा करने के लिए कुछ जानने की आकांक्षा न रहे तब उसे पूर्ण वाक्य कहा जाता है। उदाहरणतया यदि कहीं कहा गया है - हमारे प्रधान मंत्री ने आज..... तो इस वाक्यांश में जब तक कुछ और जोड़ा नहीं जाएगा, हमारी जिज्ञासा अपूर्ण ही रहेगी। अतः इसे वाक्य नहीं कहा जा सकता। परन्तु यदि कहा जाय - 'हमारे प्रधानमंत्री ने आज देश की अखण्डता पर व्याख्यान दिया।' तब इसे वाक्य माना जाएगा।

02. योग्यता : वाक्य में जो शब्द प्रयुक्त होते हैं उनमें पारस्परिक संगति होनी चाहिए। इसी संगति को योग्यता कहते हैं। उदाहरणतया यदि कहा जाय कि 'मोहन घर को पढ़ रहा है' तो इसे अयोग्य वाक्य समझा जाएगा। परन्तु इसके स्थान पर यदि 'मोहन पुस्तक को पढ़ रहा है' या 'मोहन घर को देख

रहा है' तो उसे उपयुक्त वाक्य समझा जाएगा।

03. सार्थकता : सार्थकता के अन्तर्गत इसका ध्यान रखा जाता है कि वाक्य में प्रयुक्त सभी शब्दों से सार्थकता स्पष्ट होनी चाहिए। कई बार अर्थबोध के बिना वाक्य निरर्थक हो जाते हैं, जैसे-बकरी ने शेर को पकड़ा। तो यहाँ सार्थकता की दृष्टि से यह सही नहीं होगा क्योंकि शेर बकरी को पकड़ सकता है, बकरी शेर को नहीं।

04. आसत्ति : इसे सन्निधि भी कहते हैं। इसका अर्थ है समीपता। वाक्य में प्रयुक्त होनेवाले शब्दों को देश और काल दोनों दृष्टियों से समीप रहना चाहिए। वाक्य का एक शब्द अभी कहा जाए और दूसरा तीन-चार घंटों के बाद और आगे के शब्द दूसरे चार-पाँच घण्टों के बाद कहे जाएँ तो इससे कोई अर्थबोध नहीं होगा। यथा - कल सुबह की गाड़ी से तुमको मुंबई जाना है। इस वाक्य में कुल सात शब्द हैं किन्तु ये सातों शब्द यदि एक ही समय पर कहे जाएं तो वाक्य बनेगा अन्यथा नहीं।

05. अन्विति : अन्विति में यह देखा जाता है कि व्याकरणिक दृष्टि से वाक्य में एकरुपता होनी चाहिए। वचन, लिंग, कारक, पुरुष इत्यादि की दृष्टि से वाक्य में समानरूपता होनी चाहिए। हिन्दी में प्रायः क्रिया लिंग, वचन और कर्ता के अनुरूप होती है। 'हाथी जाती है।' या 'चार लड़का आए' या 'शंकर गई।' - तो अन्विति की दृष्टि से इनको वाक्य नहीं कहा जाएगा।

वाक्य के प्रकार

वाक्य का वर्गीकरण अनेक दृष्टियों से किया जाता है। फलतः वाक्य के प्रकार भी विभिन्न आधार पर किए गए हैं, जैसे - 1. रचनानुसार, 2. क्रियानुसार, 3. अर्थ और भाव के आधार पर और 4. शैली के आधार पर।

01. रचनानुसार :

रचनानुसार वाक्य के प्रमुखतया तीन प्रकार होते हैं - 1. सरल वाक्य, 2. मिश्र वाक्य, 3. संयुक्त वाक्य। सरल वाक्य में एक उद्देश्य और एक विधेय रहता है। उदाहरणार्थ - अशोक लिखता है। मिश्र वाक्य में एक से अधिक वाक्य होते हैं, जैसे - वह लड़की, जो कल हमें मिली थी, बढ़िया नाचती है। मिश्र वाक्य में एक प्रधान उपवाक्य होता है तथा एक या अधिक आश्रित रूप वाक्य होते हैं। संयुक्त वाक्य में दो या दो से अधिक प्रधान उपवाक्य

होते हैं जिनको, 'किन्तु', 'परन्तु', 'लेकिन' या 'और' जैसे शब्दों से जोड़ा जाता है। जैसे -'मैं कल तुम्हारे यहाँ आया था, किन्तु तुम ऑफिस के लिए निकल गए थे।' तथा 'मैं आज मुंबई जाऊँगा और कल वहाँ से कलकत्ता के लिए रवाना हो जाऊँगा।' उपर्युक्त दोनों उदाहरणों में जो वाक्य प्रयुक्त हुए हैं वे प्रधान उपवाक्य ही हैं। यदि अलग से उनका प्रयोग किया जाए तो ये स्वतंत्र वाक्य भी बन सकते हैं।

02. क्रियानुसार : क्रिया के अनुसार वाक्य के दो भेद होते हैं - 1. क्रिया युक्त और 2. क्रियाहीन। क्रियायुक्त वाक्य में क्रिया का स्पष्ट निर्देश होता है। जैसे - मैं पुस्तक पढ़ता हूँ। क्रियाहीन वाक्यों में क्रिया का प्रयोग नहीं होता। अब यहाँ प्रश्न होगा कि क्रिया के बिना वाक्य संभव नहीं है ऐसा पहले कहा गया है। परन्तु सन्दर्भ-सापेक्ष वाक्य इसमें अपवाद हैं। क्रियाहीन वाक्यों में केवल 'हाँ' या 'ना' होता है, परन्तु यहाँ ध्यान रहे कि उसके पूर्व जो प्रश्न पूछा जाता है उसमें क्रिया अवश्य होती है और उसके बाद हाँ या ना में जो उत्तर दिया जाता है वहाँ पूर्ववर्ती क्रिया अध्याहार रहती है। जैसे यदि प्रश्न किया जाय कि क्या तुम कल आओगे? उसके उत्तर में यदि कोई कहता है कि 'हाँ', तो इस 'हाँ' का अर्थ होगा कि हाँ, मैं कल आऊँगा।

03. अर्थ या भाव के आधार पर : अर्थ और भाव के आधर पर वाक्य के अनेक भेद होते हैं - (क) विधि वाक्य - इसमें किसी कार्य के होने का निश्चयपूर्वक बोध होता है। इसे विधानार्थक वाक्य भी कहते हैं। यथा - रमेश खेलता है। (ळळ) निषेध वाक्य - इसमें क्रिया का निषेध होता है, जैसे - मैं नहीं लिखूँगा। (ळकळ) प्रश्न वाक्य -इसमें कोई प्रश्न पूछा जाता है और वाक्य के अंत में प्रश्न चिन्ह भी होता है, जैसे - क्या आप कल आएँगे? (ळीं) विस्मयादिबोधक वाक्य या आश्चर्य वाक्य - इस वाक्य में विस्मय या आश्चर्य प्रकट किया जाता है और वाक्य के अंत में आश्चर्य चिह्न भी होता है। यथा - राम के नाम पर पत्थर तैरने लगे थे! (ीं) आज्ञार्थक वाक्य - इस वाक्य में आज्ञा या हुकम किया जाता है। यथा - अब तुम आओ। (ींळ) इच्चार्थक वाक्य - इसमें कोई कामना या इच्छा को अभिव्यक्त किया जाता है। यथा - भगवान तुम्हारा भला करे। (ींळळ) संकेतार्थक वाक्य - इस वाक्य में कोई संकेत प्रकट किया जाता है। यथा - यदि तुम आते तो मजा आ जाता। (ींळकळ) संभावनार्थक वाक्य - इसमें कोई संभावना प्रकट की जाती है। यथा - शायद इस साल फसल अच्छी हो।

संदेहार्थक वाक्य - इसमें कोई संदेह प्रकट किया जाता है। यथा - वह पढ़ता होगा।

04. शैली के आधार पर :

शैली के आधार पर वाक्य के शिथिल, समीकृत और आवर्तक ऐसे तीन भेद होते हैं। शिथिल वाक्य सीधे-सादे वर्णन या कथन की प्रस्तुति करता है। यथा - मुंबई हमारी औद्योगिक महानगरी है। समान या असमान अर्थ वाले वाक्यों या वाक्यांशों को जब एक साथ प्रस्तुत किया जाता है तो ऐसे वाक्यों को समीकृत वाक्य कहते हैं। यथा - जैसी करनी वैसी भरनी या बाप शेर तो बेटा सवाशेर। कई बार अपने वक्तव्य को प्रभावशाली बनाने के लिए उसे सप्रयोजन दुहराया जाता है तो ऐसे वाक्यों को आवर्तक वाक्य कहा जाता है। यथा - मैं चाहता हूँ कि वर्ग में सभी विद्यार्थी उपस्थित रहें, मैं चाहता हूँ कि वर्ग में नियमित आना चाहिए।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यहाँ बहुत संक्षेप में हम डॉ. मिश्र के उपन्यासों में प्रयुक्त वाक्यों पर विचार करेंगे। डॉ. मिश्र ने ऐतिहासिक, सामाजिक, पौराणिक और चमत्कार प्रधान अनेक उपन्यासों की रचना की है। अतः उन्होंने कथावस्तु, पात्र और परिवेश के अनुसार तथा किसी संकल्पना की स्पष्टता के लिए विभिन्न प्रकार के वाक्यों का प्रयोग किया है। डॉ. मिश्र की वाक्य-योजना संदर्भानुसार संक्षिप्त अथवा विस्तृत रूप में मिलती है। मिश्रजी की संवाद योजना में प्रायः सरल वाक्यों की संख्या काफी है साथ ही समीकृत और अर्थ या भाव के आधार पर सारे वाक्य-प्रकारों के प्रयोग भी प्राप्त होते हैं। जब डॉ. मिश्र किसी संकल्पना का विवेचन करते हैं अथवा उसे दृष्टांत द्वारा समझाते हैं तो संयुक्त वाक्य, मिश्र वाक्य, आवर्तक वाक्य और समीकृत प्रकार के वाक्यों का प्रयोग करते हैं। डॉ. मिश्र ने किसी भाव या विचार को स्पष्ट करने के लिए आवश्यकतानुसार वाक्यों का गुंफन कर लंबी-लंबी वाक्य-रचना भी की है। क्रिया युक्त और क्रियाहीन वाक्य भी हमें मिल जाते हैं।

वस्तुतः मिश्रजी की वाक्य-रचना में अर्थाभिव्यक्ति की अद्भुत क्षमता है। उनके अनुभव तथा चिंतन का सशक्त रूप उन वाक्यों में गहराई से उभरकर आया है। उन्होंने आवश्यकतानुसार उपर्युक्त चर्चित सारे वाक्यों के प्रकारों का प्रयोग किया है। यहाँ उनके उपन्यासों से कुछ ही वाक्यों को उदाहरणतया प्रस्तुत करने का हमारा उपक्रम है। कोष्ठक में उपन्यास का नाम और पृष्ठ संख्या दर्शायी गई है। यथा-

1. रचनानुसार वाक्य के प्रकार :

सरल वाक्य :

क. नवीन का मोहक अंदाज वर्तमान था। (लक्ष्मण रेखा : पृ. 123)

ख. श्रीकृष्ण ने भयभीत शिशुपाल को सम्बोधित किया। (पुरुषोत्तम : पृ. 81)

ग. विलम्ब घातक होता है। (पवनपुत्र : पृ. 68)

घ. माता जीजा ने भी एक बार बड़ी सटीक बात कही। (पहला सूरज : : पृ. 243)

च. तुमको समझाना कठिन है। (पीतांबरा : पृ. 475)

मिश्र वाक्य

क. जैसे समुद्र शान्त था, उसी तरह गाँधी का अन्तर भी असंख्य चिंताओं की लहरों से उद्वेलित और व्यथित हो रहा था। (शान्तिदूत : पृ. 35)

ख. सिर में हल्का-हल्का दर्द हो रहा था, पर जिस प्रसन्नता से वह भरा जा रहा था, उसके सामने यह दर्द कुछ नहीं लगा। (सूरज के आने तक : पृ. 65)

ग. वह आज नहीं तो कल मान ही लेता है कि व्यर्थ है उसके प्रयास, जो होना होता है, वही होता है। (देख कबीरा रोया : पृ. 159)

घ. उसने कहा कि अफजल के पाप का घड़ा भर चुका है। (पहला सूरज : पृ. 195)

च. आज नई पीढ़ी, उसकी वफादार प्रजा की भावी फसल, उसकी अगुआई को तैयार खड़ी थी। (का के लागूं पांव : पृ. 129)

छ. जब शत्रु की तलवार अपनी गर्दन को उतारने पर उतर आई तो इस खड्ग ने ही तो शत्रु-गर्दन को उतारकर उनके प्राणों की रक्षा की थी। (गोबिन्द गाथा : पृ. 169)

ज. मनुष्य का कर्तव्य है कि वह हाथ पर हाथ धर नहीं बैठकर आने वाले अनुकूल समय के स्वागत को प्रस्तुत रहे। (पहला सूरज : : पृ. 270)

संयुक्त वाक्य

क. यदि आप अपने निर्णय में दृढ़ हैं और आपको सचमुच किसी पर मुकद्मा नहीं चलाना हो तो आप इस आशय का वक्तव्य मुझे लिखकर दे दीजिए। (शान्तिदूत : पृ. 58)

ख. यदि तुम इसे सद जन्म लेनेवाला और सदा मरनेवाला भी मानते हो तथापि महाबाहु अर्जुन, तुम्हें चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं। (पुरुषोत्तम : पृ. 273)

ग. मीरा ने ललिता से पता कर लिया था कि उदा अत्यन्त सरल है और महल की राजनीति से उसे कुछ लेना-देना नहीं। (पीतांबरा : पृ. 315)

घ. हम यहाँ कुछ खाने पीने नहीं अपितु कुछ बातें करने आए हैं, शायद अत्यन्त अंतरंग बातें। (लक्ष्मण रेखा : पृ. 131)

च. ये सिया मुसलमान सुन्नी मुगलों की दासता स्वीकार करने को तैयार नहीं थे और बार-बार बगावत पर उतर आते थे। (गोबिन्द गाथा : पृ. 242)

छ. आपको भी पता है कि कई मुसलमान सिपाहियों, कई मुगल सिपहसालारों को भी उनके सामने से भागना पड़ा है या अपनी जान कुर्बान करनी पड़ी है। (गोबिन्द गाथा : पृ. 244)

ज. आज लगाओ रक्त चन्दन का तिलक मेरे ललाट को और करो कुमकुम का टीका इस तलवार पर। (पहला सूरज : पृ. 159)

झ. इज्जत अथवा अदब की कोई पहचान नहीं उभरी बल्कि उनकी जगह एक अनाम शोखी अथवा खुराफात की झलक वहाँ दिखाई पड़ी। (का के लागूं पांव : पृ. 129)

ट. मैंने अपने बेडरूम में ही एक पूजा-स्थान अलग कर रखा था और नित्य सुबह घंटे-डेढ़-घंटे मैं पूजा-अर्चना में अवश्य लगाता। (बंधक आत्माएँ : पृ. 49)

2. क्रियानुसार वाक्य के प्रकार

क्रियायुक्त

क. मैया दधि बिलो रही थी। (प्रथम पुरुष : पृ. 93)

ख. शक्ति लगते ही लक्ष्मण मूर्छित हो गए। (पवनपुत्र : पृ. 165)

ग. मुझे तो गुली-डंडे का खेल ही अच्छा लगता है। (का के लागूं पांव : पृ. 86)

घ. मंदिर में संध्या आरती समाप्त हुई। (पीतांबरा : पृ. 625)

च. तुम्हारी बातें तो मुझे झकझोर गई। (एक और अहल्या : पृ. 99)

क्रियाहीन

क. ऐसी बात नहीं हुजूर। (देख कबीरा रोया : पृ. 287)

ख. आपकी आज्ञा शिरोधार्य (गोबिन्द गाथा : पृ. 102)

ग. धन्यवाद। (गोबिन्द गाथा : पृ. 102)

घ. जो हुक्म जहाँपनाह! (गोबिन्द गाथा : पृ. 245)

च. आज के लिए इतना ही। (शान्तिदूत : पृ. 48)

छ. तो, तो कुछ नहीं। (सूरज के आने तक : पृ. 91)

ज. हां और उसके बाद तुम्हारा। (एक और अहल्या : पृ. 63)

3. अर्थ या भाव के आधार पर वाक्य के प्रकार :

विधि वाक्य

क. मेरे सिर में दर्द है । (लक्ष्मण रेखा : पृ. 114)

ख. बिटिया को थोड़े दिन यहाँ छोड़ जाइए। (नदी नहीं मुड़ती : पृ. 127)

ग. पर वह तुम्हारा चित्र अवश्य बनाएगी। (प्रथम पुरुष : पृ. 160)

घ. तुम्हें अपनी आवारागर्दी से बाज आना पड़ेगा। (देख कबीरा रोया : पृ. 267)

च. आप अपन इन मुरीदों को मेरे पास छोड़े जा सकते हैं। (गोबिन्द गाथा : पृ. 108)

निषेध वाक्य

क. ये साधु-संन्यासी महल में प्रवेश नहीं पाएंगे। (पीतांबरा : पृ. 215)

ख. रत्नजटित गलियाँ और हीरे-जवाहरातों के दीप भी यहाँ देखने को नहीं मिलते थे। (बंधक आत्माएँ : पृ. 85)

ग. प्रेम दो से एक साथ हो ही नहीं सकता। (प्रथम पुरुष : पृ. 131)

घ. नानकीदेवी ने अब बात को अधिक तूल नहीं देना ही उचित समझा। (का के लागूं पांव : पृ. 329)

च. ऐसे व्यक्ति को महामात्य रखना सर्प को अपनी आस्तीन में पालने के सिवा और क्या है? (पुरुषोत्तम : पृ. 282)

प्रश्न वाक्य

क. चैनपरी इस तरह के स्थान में रहती है? (बंधक आत्माएँ : पृ. 85)

ख. मुझे यहाँ आने की खुशी में एक छोटी-सी भेंट दोगी? (शान्तिदूत : पृ. 147)

ग. राजाज्ञा की अवहेलना का अर्थ जानती हो? (पीतांबरा : पृ. 255)

घ. मुझे क्यों इस शतरंज की चाल में मोहरा बनाना चाहती है? (गोबिन्द गाथा: पृ. 40)

च. आपने कोई सवाल नहीं पूछा फिर जवाब किसका? (का के लागूं पांव : पृ. 158)

छ. क्या केवल सदाचारी, धार्मिक नहीं हो सकता? (नदी नहीं मुड़ती : पृ. 80)

ज. सिंहनी का बच्चा कहीं छागलों के दूध पर पला है? (पहला सूरज : पृ. 79)

झ. घर आई विजय-श्री को अपमानित करने का परिणाम अच्छा होगा क्या? (पवनपुत्र : पृ. 185)

विस्मयादिबोधक वाक्य

क. जिस दिन मुगलों का सितारा गर्दिश का शिकार हो! (गोबिन्द गाथा : पृ. 104)

ख. जब मुझे गुरु-गृह नहीं जाने दिया गया तो ऋषि-कुल में इस वानर का कहाँ स्वागत होगा! (पवनपुत्र : पृ. 40)

ग. इस वय में भी श्रीकृष्ण का यह आकर्षण! (पुरुषोत्तम : पृ. 187)

घ. लड़ाई और शिकार तो क्षत्रियोचित धर्म हैं भाभी! (पीतांबरा : पृ. 444)

च. किसी व्यक्ति को जिंदा जला देना वह भी मात्र संपत्ति के लोभ में ! (गोबिन्द गाथा : पृ. 125)

आज्ञार्थक वाक्य

क. इस स्थान से वह कुपात्र शीघ्र ही भागे, भागे। (देख कबीरा रोया : पृ. 106)

ख. माँ-बदौलत अब आपको यहाँ से जल्द-से-जल्द रुख्सत होने का हुक्म देते हैं। (गोबिन्द गाथा : पृ. 245)

ग. संगठन को और मजबूत करो। (पहला सूरज : पृ. 143)

घ. बन्द करो यह अनर्गल प्रलाप। (प्रथम पुरुष : पृ. 184)

च. आप नहीं ले जा सकते इन्हें। (पवनपुत्र : पृ. 347)

इच्छार्थक वाक्य

क. यशस्वी बनो। (देख कबीरा रोया : पृ. 116)

ख. हमेशा खुश रहो । (देख कबीरा रोया : पृ. 121)

ग. तुम्हारी मनोकामना पूर्ण हो शिवा। (पहला सूरज : पृ. 160)

घ. मेरा आशीर्वाद सदा रक्षा-कवच बनकर तुम्हारे साथ रहेगा। (का के लागूं पांव : पृ. 416)

च. जब तक इस संसार में चांद-सूरज की रोशनी चमके गोविन्दराय का नाम भी रोशन रहे। (गोबिन्द गाथा : पृ. 127)

संकेतार्थक वाक्य

क. गांधी के आलोचकों का मानना है कि अगर उस समय इस आन्दोलन को वापस नहीं लिया जाता तो 1922 में ही भारत स्वतंत्र हो गया होता। (शान्तिदूत : पृ. 139)

ख. काश, गाँधी को एक रहस्य का पता होता तो उन्हें यह पीड़ा नहीं होती और भारत हिन्दुस्तान तथा पाकिस्तान दो टुकड़ों में नहीं बँटता। (शान्तिदूत : : पृ. 188)

ग. यह तो परिस्थिति प्रतिकूल हो गई वर्ना शकट नहीं उलटता तो वह वामन तो गर्दन मरोड़ ही देता उस नन्द के लाला की। (प्रथम पुरुष : पृ. 249)

घ. आपके लालमोहर नहीं रहते तो आज हम प्राणों से हाथ धो बैठे थे। (सूरज के आने तक : पृ. 45)

संभावनार्थक वाक्य

क. माता का क्या वह तो मेरी सभी बातों का आँख मूंदकर समर्थन देती, पर पिता को मैं जानती हूँ, वे इस संबंध में कभी भी मान्यता नहीं देंगे। (लक्ष्मण-रेखा : पृ. 190)

ख. अपराधियों को दंड मिलेगा और जिसका जैसा अपराध है वैसा ही मिलेगा। (गोबिन्द गाथा : पृ. 125)

ग. अगर मनीष ही अपने अन्दर साहस बटोरकर उसे पूरी तरह आश्वस्त कर देता है तो वह दुनिया की हर शक्ति का सामना कर सकती थी। (एक और अहल्या : पृ. 39)

घ. अगर शत्रु ने तालाब की सेना को ही असली मोर्चा समझ उस पर हमला किया तो इस स्थान से उसकी अच्छी खबर ली जा सकती थी। (गोबिन्द गाथा : पृ. 306)

च. अगर मथुरा चढ़ आने के पूर्व ही वह कंस के दुर्धर्ष मल्लों को समाप्त कर सका तो विद्रोही प्रजा और प्रतिकूल सेनाध्यक्ष की तटस्थता के बल पर वह सहज ही कंस की हत्या करने में सफल हो जाएगा। (प्रथम पुरुष : पृ. 273)

संदेहार्थक वाक्य :

क. पर ठहरिए कहीं फिर छली जा रही होऊँ मैं - कैसे मान लूं कि यह कोई राक्षसी माया नहीं है? (पवनपुत्र : पृ. 135)

ख. जेल में सुधार हुआ पं गोवर्द्धन में ? (सूरज के आने तक : पृ. 163)

ग. कहना कठिन है कि गुरु को पांवटा-प्रवास की सुविधा उपलब्ध नहीं हो पाती तो उनका रचनाधर्मी रूप इस रूप में निखरकर आ पाता अथवा नहीं। (गोबिन्द गाथा : पृ. 93)

4. शैली के आधार पर वाक्य के प्रकार :

शिथिल वाक्य :

क. तुम्हारी लक्ष्मण-रेखा सदा अपने स्थान पर कायम रहेगी। (लक्ष्मण रेखा : पृ. 79)

ख. इस महत्वाकांक्षी गुरु के पैर कुछ अधिक ही बड़े होने लगे हैं। (गोबिन्द गाथा :: पृ. 61)

ग. गुरु ने पंजाब कौर को गद्दी-आसीन किया। (गोबिन्द गाथा : पृ. 125)

घ. असल पूजा-उत्सव तो जगदम्बिका के आँगन का है। (पहला सूरज : पृ. 158)

च. नर ही अपने आचरण से नारायण बन जाता है। (पुरुषोत्तम : पृ. 153)

समीकृत वाक्य :

क. थोथा चना बाजे घना। (सूरज के आने तक : पृ. 8)

ख. शेर सेर तो बच्चा सवाशेर। (पहला सूरज : पृ. 163)

ग. जैसा अन्न वैसा मन। (पवनपुत्र : पृ. 114)

घ. जैसी प्रजा वैसी सरकार। (लक्ष्मण-रेखा : पृ. 56)

च. सौ की लकड़ी एक का बोझ। (गोबिन्द गाथा : पृ. 297)

आवर्तक वाक्य :

क. प्रसन्नता, प्रसन्नता और प्रसन्नता पृथा सोचती है, क्या आश्चर्य कि इसी

प्रसन्नता ने प्रेम के सदृश स्वर्णिम वरदान की भी सृष्टि की हो क्योंकि प्रेम-जनित प्रसन्नता की तुलना में कोई और प्रसन्नता टिक पाती क्या? (एक और अहल्या : पृ. 211)

ख. ऐसा नहीं कि उन्होंने कंस को अपनी मनमानी से रोकना नहीं चाहा था या उसके अपार अहंकार पर अंकुश लगाने का प्रयास नहीं किया था, पर दोनों को सम्मिलित प्रयास भी अरण्यरोदन से कुछ अधिक नहीं सिद्ध हुआ था। (पुरुषोत्तम : पृ. 13)

ग. पढ़ाते हैं मेरी तरह लोगों को जिन्होंने कभी स्कूल-पाठशाला का मुँह नहीं देखा और जिनके लिए काले अक्षर और काली भैंस में कोई भेद नहीं होत। (सूरज के आने तक : पृ. 7)

घ. उगता सूरज जहाँ प्रतीक है जागृति का, प्रगति का, कर्म और संघर्ष का, वहीं डूबता सूरज प्रतीक है सुषुप्ति का, अगति का, अकर्मण्यता और अवसान का। (लक्ष्मण-रेखा : पृ. 58)

वर्णमैत्री युक्त वाक्य

हम चतुर्थ अध्याय के अन्तर्गत वर्णमैत्री युक्त शब्दों की रचना की चर्चा कर चुके हैं। डॉ. मिश्र के उपन्यासों में वर्णमैत्री युक्त वाक्य भी पाए जाते हैं जिनमें से कुछेक वाक्यों को हम उदाहरणतया प्रस्तुत कर रहे हैं। यथा-

1. उसके मन के सलिल विस्तार पर अनगिनत सरसिज सज आए हैं।
2. महाराणा मन के मारे मर रहे हैं।
3. बात बनने के बदले बिगड़ रही है।
4. कर्मवती के कक्ष की वह कुमंत्रणा यहीं पर समाप्त हुई।[5]
5. पशु-पक्षी भी प्रकृति के इस प्रकोप से पीड़ित हो आए।
6. किसी उद्वेलित सागर की असंख्य ऊर्मियों की तरह इस अनाम आलोक की अनन्त आलोड़ित लहरें मालोजी को चतुर्दिक्-बाएँ, दाएँ, ऊपर-नीचे - आप्लावित कर रही थीं।
7. अगर सर्वशक्तिमान, सर्व-समर्थ, सर्वव्यापी, साक्षात् चिन्मय परमेश्वर होते तो एक साधारण पत्नी के मोह मे ऐसा विह्वल।
8. आत्मा तो अजर-अमर, अनादि और अनन्त है।[6]

9. आकाश में चाँद का चांदी-सा चमचमाता थाल निकल आया था।
10. समता, समदृष्टि अथवा सभी में समभाव ही योग है।
11. पराए धन को पराए हाथों में सौंपने के पश्चात् ही मन को शांति प्राप्त होती है।
12. बहुत से पंडित-पुजारियों की पगड़्याँ इस प्रकाश में चमचम कर रही थीं।[7]
13. अनुपस्थिति से उत्पन्न अराजकता और अव्यवस्था अप कहीं नहीं रही थी।
14. आँसू औरतों के आभूषण हो सकते हैं।
15. विद्या भी कहीं विक्रय की वस्तु है?[8]
16. परोपकार ही पुष्य है और दूसरों को पीड़ा पहुँचाना ही पाप है।[9]
17. यह दर्द करील के काँटे के कलेजे में ही चुभने के समान विचलित कर गया।[10]
18. एक विक्षिप्ता ग्वालन गोकुल की गलियों में राग अलापती चलती है।
19. महासमर रूपी महासमुद्र के इन मगरमच्छों से हमारी सेना के मीन-मत्स्य किस आधार पर विजय प्राप्त करेंगे?[11]
20. वह कोई कृत्रिम कमल नहीं कुतुबमीनार फांद रही हो।[12]

प्रोक्ति

पहले वाक्य को भाषा की महत्तम इकाई माना जाता था। परन्तु आधुनिक भाषा-वैज्ञानिक प्रोक्ति को भाषा की महत्तम इकाई मानते हैं। जब एकाधिक वाक्यों में बात किसी एक विषय, वस्तु या व्यक्ति को केन्द्र में रखकर होती है तब उसे प्रोक्ति कहते हैं। यथा - ''राम दशरथ के पुत्र हैं। राम की माता का नाम कौशल्या है। भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न राम के भाई हैं। राम की पत्नी का नाम सीता है। राम को भाईयों से बहुत प्रेम था। वे भाइयों के लिए अपना सर्वस्व त्यागने के लिए तत्पर रहते थे।'' उपर्युक्त वाक्य-समुच्चयों मे जो बात कही गई है वह राम के सन्दर्भ में ही है। अतः इस वाक्य-समुच्चय को प्रोक्ति कहा जाएगा। यहाँ पर डॉ. मिश्र के उपन्यासों से उदाहरण स्वरूप कुछ प्रोक्तियों को उद्धृत किया जा रहा है। यथा -

01. वाराणसी, पुनीत जाह्नवी के तीर बसी वाराणसी। भगवान भूतभावन, विश्वेश्वर की प्यारी नगरी वाराणसी। साधु-संतों, संन्यासियों और सामान्य जनों की भी आध्यात्मिक स्थली वाराणसी। ज्ञान-विज्ञान, धर्म-पुराण, भक्ति-

भाव और अथाह पांडित्य और वैदूष्य की भूमि वाराणसी। शिव के त्रिशूल पर बसी बैकुंठवासियों के लिए प्राण त्यागते ही स्वर्ग के कपाटों को तत्काल उद्घाटित करने की शक्ति से सम्पन्न वाराणसी। अर्थात् शिव के 'तारक' मंत्र से घोर-से-घोर पापियों को भी तारने वाली यह टेढ़ी-मेढ़ी गलियों और ऊंची-नीची सीढ़ियोंवाली अद्भुत नगरी![13]

02. एक कौआ था। बहुत तंग किया उसने इनको। कभी पास आए कभी दूर भागे। पास आने पर ये उसे पकड़ने को लपकें कि वह दूर भाग जाए। ललचा-ललचा कर तंग कर दिया उसने श्रीराम को। अन्ततः वह उनकी पकड़ में आया और उन्होंने छोड़ भी दिया तो उसे लगा उनका हाथ उसके पीछे-पीछे चला आ रहा है। वह उड़ते-उड़ते थक गया - ऊपर, नीचे, पूरब-पश्चिम, दक्षिण-उत्तर। पर श्री राम का हाथ उसके पीछे। अन्त मे आकर वह उनके चरणों में गिर पड़ा। श्री राम ने तत्काल उसे क्षमा-दान करते हुए कहा - 'जाओ, अब तुम किसी से नहीं डरोगे।' तभी से कौए इतने निर्भीक हो गए कि डराये भी नहीं डरते।[14]

03. दिन के दो बजे होंगे। दक्षिण भारत में अपने सुसज्जित शिविर में शाहंशाह आलमगीर औरंगजेब किसी बूढ़े बाघ की तरह, इस कोने से उस कोने का चक्कर काट रहा था। दाढ़ी और मूंछ के केश पूरी तरह सफेद हो गए थे। कमर कुछ कुछ झुक आई थी। चेहरे पर एक नूर फिर भी वर्तमान था। अगर यह नहीं होता तो कहना कठिन था कि यही वह व्यक्ति था जिसके भय से कभी सारा हिन्दुस्तान, उत्तर से लेकर दक्षिण और पूरब से पश्चिम तक पीपल के सूखे पत्ते की तरह काँपता था।[15]

04. भूमिका ग्रंथ नहीं होती चाहे वह जितनी भी बड़ी और विस्तृत क्यों न हो। पर कुछ लोग भूमिका को ही ग्रन्थ मान बैठते हैं - शायद उसके दीर्घाकार स्वरूप को देख कर। पर भूमिका फिर भी भूमिका ही रहती है, उसमें ग्रन्थ को ढूंढना मूर्खता है। उससे, आगे आनेवाले विषय की गन्ध-मात्र मिल सकती है पर वह ग्रन्थ का स्थान ले ले ऐसा कभी देखा-सुना नहीं गया। प्रातः का अरुणाभ बिम्ब चाहे उससे प्रकाश का जो बिम्ब फूट रहा हो, मध्याह्न का तपता-जलता मार्तण्ड नहीं होता वह। प्रातः का सूरज, मध्याह्न के मार्तण्ड की भूमिका से अधिक नहीं होता।[16]

05. व्यक्ति चाहता क्या है और हो क्या जाता है? बहुत सतर्कता और बुद्धिमानी

से बनाई उसकी योजनाओं पर बात की बात में पानी फिर जाता है और आकांक्षा के ऊँचे आकाश में उड़ान भरते उसके मन के पखेरू बात की बात में समयरूपी बहेलिये के बाणों से विद्ध होकर पृथ्वी पर आ गिरते हैं। वह सपने देखता है सोते में नहीं जागते में किन्तु जब तक वह अपने सपनों को साकार करे, उनके आकार ही धूमिल और ध्वस्त हो जाते हैं।[17]

06. राधा गोरी, छरहरी, इक्कीस-बाइस वर्ष की युवती थी। लावण्य जैसे उसके चेहरे से फूट पड़ता था। अमलतास की छड़ी की तरह सीधे तराशे बदन पर गाँव देहात का साधारण परिधान भी खूब फबता था। वैसे, उसकी शिक्षा-दीक्षा तो शहर में हुई थी और उसने प्राचीन साहित्य और संस्कृति में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की थी, पर जब से वह इस नौकरी में आई थी, उसने शहरी लिबास को तिलांजलि दे खादी की सफेद साड़ी और ब्लाउज़ को अपना लिया था। इतनी ऊँची पढ़ाई और इस असाधारण सौन्दर्य के बावजूद उसमें अभिमान लेश मात्र भी नहीं था, बल्कि अपने सम्पूर्ण व्यक्तित्व को भूलकर वह गाँव वालों के साथ इस तरह घुल मिल गई थी कि किसी को सहज विश्वास ही नहीं होता था कि वह एक उच्च शिक्षा प्राप्त सम्मानित युवती है। पर, जिस तरह बादल के पर्दे को छेदकर भी सूर्य की किरणें फूट-फूट आती हैं, उसी तरह सादगी के बावजूद राधा का अप्रतिम रूप लोगों को बांध-बांध लेता था।[18]

07. कौन कहता है कि अवसर बार-बार नहीं आता? आदमी अपनी आँखें खोल कर चले तो वह कई बार आता है और यह अवसर ही है जो किसी को कहीं-से-कहीं पहुँचा देता है। धरती की धूल अवसर पाकर आसमान चूमने लगती है। मनुष्य भी अवसर को पहचानकर और उसका उचित उपयोग कर प्रगति के उत्तुंग शिखर पर आसीन हो जाता है।[19]

08. भगवान, भगवान होता है और आदमी, आदमी। लाख प्रयासों के बाद जैसे बगला हंस नहीं बन सकता; उसी तरह सेंकड़ो ढोंग करके भी कोई आदमी भगवान नहीं बन सकता। इसका सबसे अच्छा प्रमाण है कि प्रकृति इन तथाकथित भगवानों को धर दबोचती है पर भगवान पर प्रकृति का कोई वश नहीं चलता।[20]

09. असम के गाँव वस्तुत: प्रकृति के क्रोड़ में बसे हुए थे। घरों के बीच लम्बे फासले और हर घर चारों और से वृक्षों और वनस्पतियों से घिरा हुआ। ऐसा

कि बाहर से ध्यान से नहीं देखो तो पता भी नहीं चले कि वहाँ कोई घर भी है। घर की बगल में ही फूल-पत्तों की 'बाड़ी' ही नहीं, धान के खेत भी। घर के अन्दर, और आवश्यक चीजों के अलावा प्रायः एक हाथ-करघा जो घर के सूती और रेशमी वस्त्रों की व्यवस्था तो करता ही था, आय का कुछ कम बड़ा साधन नहीं था। गोया पूरा घर अपने में एक पूर्ण इकाई।[21]

मुहावरे

भावों और विचारों की अभिव्यक्ति को अधिक प्रभावपूर्ण तथा सशक्त बनाने के लिए मुहावरों का प्रयोग भाषा में किया जाता है। मुहावरों के प्रयोग से भाषा का सहज रूप उजागर होताहै। 'मुहावरा' अरबी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है 'अभ्यास/बातचीत'। अभ्यासवश एक अभिव्यक्ति कभी-कभी एक विशेष अर्थ देने लगती है। 'हिन्दी शब्द सागर' में कहा गया है - ''लक्षणा या व्यंजना द्वारा सिद्ध वह वाक्य या प्रयोग जो किसी एक ही बोली अथवा लिखी जानेवाली भाषा में प्रचलित हो और जिसका अभिधेय अर्थ से विलक्षण हो, मुहावरा कहलाता है।''[22] अर्थात् मुहावरा उस वाक्यांश को कहते हैं जिसके प्रयोग से वाक्य के अर्थ में विलक्षणता उत्पन्न हो जाती है। जैसे अंगूठा दिखाना एक साधारण-सा वाक्यांश है। साधारण रूप से इसका अर्थ है अंगूठे को दिखाना। पर यह एक मुहावरा है, अपने भीतर प्रत्यक्ष अर्थ से विलक्षण अर्थ रखता है - धोखा देना, देने से मुकर जाना।

मुहावरों का प्रयोग भाषा में सौष्ठव, माधुर्य और कथन में चमत्कार तथा प्रभाव उत्पन्न करने के लिए किया जाता है। मुहावरे प्रायः शारीरिक चेष्टाओं, अस्पष्ट ध्वनियों, कहानियों, तथ्यों, घटनाओं, स्थितियों अथवा भाषिक विलक्षण-प्रयोगों के आधार पर ही निर्मित होते हैं। मुहावरों का जन्म लोक मे होता है और लोकजीवन में प्रयुक्त भाषा में मुहावरे घुले-मिले होते हैं, उनकी भाषा में सहज रूप में आ जाते हैं। कृत्रिम भाषा में मुहावरे को स्थान नहीं या यों कहें कि जिस भाषा में मुहावरेदानी नहीं है वह मृतप्रायः या कृत्रिम है। मुहावरों के प्रयोग से भाषा की सम्प्रेषण शक्ति प्रभावकारी होती है। डॉ. मिश्र के उपन्यासों में प्रयुक्त मुहावरों में सम्प्रेषण शक्ति का प्रभाव लक्षित होता है।

मुहावरों का वाक्य में प्रयोग होने से उसकी क्रिया, वाक्य के लिंग, वचन-कारक के अनुसार परिवर्तित हो जाएगी परन्तु मुहावरे का रूप नहीं बदला जा सकता क्योंकि वे प्रयोग में रूढ़ हो जाते हैं। जैसे 'कमर टूटना' में न तो 'कमर' के स्थान

पर 'कटि' और न 'टूटना' के स्थान पर 'भंग' प्रयोग किया जा सकता है। मुहावरों के सन्दर्भ में जब हम डॉ. मिश्र के उपन्यासों का अनुशीलन करते हैं तो ज्ञात होता है कि उन्होंने मुहावरों के शब्द को बदलकर प्रयुक्त किया है। जैसे - 'प्रशंसा के पुल बांधना' का प्रयोग है तो 'तारीफ के पुल बांधना' का भी प्रयोग मिलता है। ऐसे तो अनेक मुहावरे मिलते हैं, परन्तु इसे हम दोष नहीं कह सकते क्योंकि लेखक ने अपने ऐतिहासिक, पौराणिक, सामाजिक उपन्यासों के पात्र एवं परिवेश के अनुसार शब्दों में परिवर्तन किया है। उनके मुहावरों में भी संस्कृत और उर्दू का प्रभाव अधिक दिखाई देता है। इसीलिए एक ही मुहावरा अलग-अलग शब्दों द्वारा प्रयुक्त किया गया है। जैसे राहत की सांस लेना मुहावरे का प्रयोग है तो कहीं चैन की सांस लेना, कहीं पर भगवान को प्यारे हो जाना तो कहीं पर खुदा को प्यारे हो जाना, कहीं कमजोर नस पर उंगली रखना तो कहीं दुर्बल नस पर उंगली रखना, कहीं पर नासिका के आगे कुछ नहीं दिखाई देना तो कहीं पर नाक के आगे कुछ दिखाई नहीं देना, कहीं धूप में बाल नहीं पकाना तो कहीं धूप में केश धवल नहीं करना, आदि-आदि। डॉ. मिश्र के उपन्यासों में अनेक नवीन मुहावरों के प्रयोग मलते हैं। कहीं-कहीं तो कहावत का भी मुहावरे के रूप में प्रयोग मिलता है। डॉ. मिश्र के उपन्यासों मे तो हजारों की संख्या में मुहावरे उपलब्ध होते हैं परन्तु उन सभी को सूचीस्थ करना न संभव है न समुचित। अतः यहाँ कुछ प्रचलित और विशिष्ट मुहावरों को संगृहीत किया गया है। यथा-

लाले पड़ना, ठन जाना, लाशें पट जाना,दांत कटी रोटी खाना, हथियार डालना, बवाल खड़ा होना, मांज-मांजकर चमकाना (ज्ञान के सन्दर्भ में), बात का बतंगड़ बनाना, पहेलियाँ पर पहेलियाँ बुझाना, जीभ पर नाचना (वेद के सन्दर्भ में), बात की तह तक पहुँचना, काले अक्षर और काली भैंस में कोई भेद न होना (कहावत का मुहावरे रूप में नवीन प्रयोग), होठों पर ताला लगाना, चोंचें भिड़ाना, पके आम की तरह टपकना, बम की तरह फटना, पिल पड़ना, ढाक के तीन पात, बोरिया-बिस्तर गोल करना, बर्रे के छत्ते में हाथ देना, हाथी के दिखावे के दांतों पर ध्यान देना (नवीन प्रयोग), हामी भरना, जान छुड़ाना, तिलांजलि देना, जाल बिछाना, हाथ पीले कर देना, नाक कटवाना, जादू सिर चढ़कर बोलना, सोलह आने ठीक बैठना, मुँह की बात छीन लेना, दाल में कुछ काला होना, रंग में रंग जाना, दिल हथेली से फिसल पड़ना, वाणी पर सरस्वती बिराजना, हाथ मिलानेवाला होना (बराबरी का होना के अर्थ में प्रयुक्त), कान काटना, पानी सिर के ऊपर चढ़ जाना, दूध-पानी की तरह मिल जाना (नवीन प्रयोग), छाती दूनी होना, सकते में आ

जाना, सिर चढ़ाना, टट्टी ओट में शिकार खेलना, कमर कसना, मुँहतोड़ जवाब देना, इति-श्री करना, राई को पहाड़ और पहाड़ को राई बनाना (नवीन प्रयोग), मोम की तरह पिघल पड़ना (नवीन प्रयोग), दंग रह जाना, आगाह करना, जान पर खेलना, काँटों में घसीटना, असूलों को ताक पर नहीं रखना, मन के फूल खिल आना, सब्ज-बाग दिखाना, आग में झोंकना, आग पर घी पड़ना, सिर पर पैर रक दौड़ना, नाक-भौं सिकोड़ना, डाली का पका आम होना, पिंड छुड़ाना, लम्बी उड़ानें भरना, गुदड़ी के लाल होना, मुँह लटक आना, खाट पकड़ लेना, बाल बांका न होना, तिल का ताड़ और ताड़ का तिल बनाना, गुल खिलाना, पेट में चूहे दौड़ना, कलेजे पर पत्थर रखना, पैरों की धूल के बराबर होना, मुँह की बात छीन लेना, जान की बाजी लगा देना, कुछ उठा नहीं रखना, मीन-मेख निकालना, घिग्घी बंध जाना, हाथ-पाँव फूल जाना, जले पर नमक छिड़कना, टांग अड़ाना, आस्तीन में सांप पालना;[23] गड़े मुर्दे उखाड़ना, घाट-घाट का पानी पीना, हाथ-पैर मारना, आसमान से गिरना, विष घोलना, जज्बातों के गले घोंटना, आग को हवा देना, आँखें मोड़ना, कुंडली मारकर बैठना, किसी से बीस ठहरना, चिराग लेकर ढूँढना, जान में जान आना, नाक का फोड़ा बन आना, नक-चढ़े होना, दांत तले ऊँगली दबाना, कलेजा मुँह को आना, मुँह की खाना, सिर-आँखों पर बिठाना, इज्जत धूल में मिल जाना, सिर मुड़ाते ओळे पड़ना, बांछे खिल जाना, मुँह पर हवाइयाँ उड़ना, बाज आना, नींद हराम हो जाना, लोहा मानना, कमर कमान बन जाना, लार टपकाना, जीना हराम कर देना, मुँह मे पानी आना, रेत की मछली की तरह तड़पना, चार चाँद लग जाना, घास डालना, आँखें मूँदकर बातें मानना, पेट पर लात मारना, आँखों में धूल डालना, आँखें खोल देना, आँखों का कांटा बनना, कुत्ते की मौत मरना, आँखों में उंगली डालना, पैरों में बेड़ियाँ डालना, राह में रोड़े अटकाना, लेने के देने पड़ जाना, पापड़ बेलना, प्रशंसा का पुल बांधना, बेड़ा गर्क कर देना, ऊँट की पीठ का अन्तिम तिनका होना, पैरों में कुल्हाड़ी लगाना, छप्पर फाड़कर देना (नवीन प्रयोग), बेड़ा पार होना, चैन की सांस लेना, बना-बनाया काम मिट्टी हो जाना, नाक पर मक्खी नहीं बैठने देना, रेत से तेल निकालना, सिर उठाना, आँखों में पट्टी बांध तोड़ना, दीवारें खड़ी करना;[24] छत्तीस का रिश्ता होना, मुँहताज नहीं होना, फूटी आँखों नहीं सुहाना, दूध के धूले होना, ानक पर मक्खी नहीं बैठने देना, आड़े हाथों लेना, पत्थर बनकर अड़ जाना, अपना उल्लू सीधा करना, कान खड़े हो जाना, बिन बुलाए मेहमान की तरह जाना, शामत आना, पौ बारह होना, इस कान से सुन उस कान से बाहर कर देना (नवीन प्रयोग), घोड़े बेचकर सोना, जान जोखिम में

डालना, जान हथेली पर रखना, फुले नहीं समाना, मिट्टी पलीद करना, कानों में उंगलियाँ डालना, कच्ची गोलियाँ नहीं खेलना, हाथ धो बैठना, सीना तानकर खड़े होना, प्राण न्योछावर करना, पानी फेर देना, हाथ पर हाथ रख बैठना, कन्नी काटना, साँप सूंघ जाना, हाथ धोकर पीछे पड़ना, बगले झाँकना, कबाब में हड्डी बनना, हवन करते हाथजलना, अंगदीय टांग अड़ाना, टांय-टांय फिस हो जाना, सिर पीटकर रह जाना, पानी के भाव बिक जाना, नहले पर दहला दागना, बिना सिर-पैर की बात होना, हाथ मैला नहीं करना, आँखें मूँदकर चलना, अपने पैरों पर खड़े होना, बिना मौत मरना, मुँह नोच लेना, भीगी बिल्ली बन जाना;[25] धत्ता बनाना, प्रश्नचिन्ह लगाना, हाँ में हाँ मिलाना, हाथ मलना, नींव की ईंट बनना, धूल चटाना, चेहरे का रंग उड़ जाना, पैरों तले रौंदना, प्राणों से हाथ धोना, उल्टी गंगा बहाना, सुरसा के मुँह की तरह बढ़ना, मन के पुए पकाना, मरा हुआ साँप सिद्ध होना, कुंडली मारकर बैठ जाना, बात आई-गई हो जाना, हवा के रुख को पहचानना, कंधे-से-कंधा मिलाना, मुख सफेद हो आना, सिर पीटकर रह जाना, सब्जबाग दिखाना;[26] गागर में सागर भरना, सिर पर पैर रख भागना, धूल-धूसरित कर देना, शिरोधार्य करना, काल-कवलित हो जाना, नौ-दो ग्यारह हो जाना, प्राण कंठगत हो जाना, संकट के बादल घिरना, नाना नाच नाचना, उंगली उठाना, किए-कराए पर पानी फिर जाना; प्राण अनन्त पथ के पथिक हो जाना, मीन मेष निकालना, मौत के घाट उतारना, टस-से-मस नहीं होना, बात को तूल देना, मृत्यु के मुख में डालना, गाज बनकर गिरना, दाँव पर लगाना, काल के हवाले करना, आँखों में धूल झोंकना, नख-सिख काँपना, हड्डी-पसली पिस जाना, मक्खी-मच्छरों की तरह मर्दन करना, रंग में भंग करना, जमीन में गड़ जाना, कान खड़े हो जाना, प्राणों को संकट में डालना, मरने-मारने पर उतारु होना, हाथ को हाथ नहीं सूझना, पैर उखड़ना, नाक-भौं सिकोड़ना, ईंट से ईंट बजाना, पोल खुल जाना, कानों कान किसी को खबर नहीं होना, एक ढेले से दो शिकार करना, आठ-आठ आंसू बहाना, इन्द्रियों को कर्णवत् करना (नवीन प्रयोग), बाल बांका नहीं होना, रास नहीं आना, काठ मार जाना, घुटने टेकना, पीठ दिखाना, छक्के छुड़ाना, मन का बांसों उछलना;[27] घात लगाकर बैठना, किसी से उन्नीस नहीं बीस होना, आँखों का तारा बनाना, काम तमाम करना, प्राण गँवाना, दिन-दूनी रात-चौगुनी बढ़ना (काया के सन्दर्भ में), पैर पलोटवाना, नाक में दम कर देना, आँखों में बसा लेना, पशोपश में पड़ जाना, प्राणों की आहुति देना, उत्साह पर घड़ों जल पड़ जाना, छाती पीटना, सिर से पैर तक लाल हो जाना (शर्माना के अर्थ में), पानी भरना (कम पड़ना के

अर्थ में), तौल-तौलकर बातें करना, ताता-थैया कराना, दो-दो हाथ करना, आँखों का तारा बन जाना, पानी सिर के ऊपर बहना, आसमान सिर पर चढ़ाना, बोलती बन्द हो जाना, आँखों से ओझल हो जाना, मरने-मारने को प्रस्तुत रहना, दूज का चाँद होना, कानों में अमृत घोलना, दूर की हाँकना, मिट्टी में मिल जाना, पीठ पर हाथ नहीं रखने देना, आँखें जुड़ाना, आँख उठाकर नहीं देखना, खून का घूँट पीकर रह जाना, सर्प को आस्तीन में पालना, नाक के आगे कुछ नहीं दिखाई पड़ना, होश हिरन हो जाना, आँखों की पुतली बनना, धूप में केश नहीं पकाना; कोई ओर-छोर नहीं होना, आसमान छूना, मुँह मोड़ना, सिर पीट लेना, पत्थर की रेखा मानना, झांसे में आ जाना, आँखों का अंगार उगलना, अपमान का घूंट पीना, काम आना (मृत्यु होना), नाक में नकेल डालना, गर्दन उतार देना, खाली हाथ लौटना, डंके की चोट पर कहना, हाथ बांधे खड़े रहना, बिजली की तरह कौंधना, कानाफूसी होना, भूत सवार होना, दुखती रग पर हाथ रखना, कलेजे पर साँप लोटना, आंधी के तिनकों की तरह उड़ जाना, अपने में लौटना, प्राण मुट्ठी में बंद होना, ईंट का उत्तर पत्थर से देना, हाथ धोकर पीछे पड़ना, कान खोलकर सुनना;[29] रक्त की होली खेलना, दस्तक देना, चरणों में लोटना, गर्म तेल की तरह खौलना, प्राणों के लाले पड़ना, मुख में तृण दबाना, आँख-मिचौली का खेल खेलना, यावत्चन्द्र दिवाकर रहना, हाथों-हाथ लेना, माथा-पच्ची करना, पीछे नहीं मुड़ना, राजपूताने की रेत नहीं बनने देना, ग्रीवा धड़ से अलग कर देना, जवाब दे देना, हाथ जोड़ना, घाटा उठाना, टेड़ी खीर होना, घाव नासूर बन जाना, घुट्टी में पिलाना, जिह्वा लम्बी होना, बांछे खिल आना, शालिग्राम का स्नानोदक समझना (नवीन प्रयोग), आकाश-कुसुम की अभिलाषा करना (नवीन प्रयोग), बायें हाथ का खेल होना, पैरों के नीचे से धरती खिसक जाना, इन्द्रियाँ कर्णवत हो जाना, एक तीर से एक ही साथ दो शिकार करना (नवीन प्रयोग), कौओं की तरह कांव-कांव करना, सर्पिणी को अधिक दुग्ध पिलाना, उंगली पर नचाना, सांस उखड़ना, कंठ में मिश्री की डली होना (नवीन प्रयोग), मुफ्त की रोटी तोड़ना, बलि की बकरी बनना, धूप में केश धवल नहीं होना, तलवार में जंग नहीं लगना, शतरंज की गोटी बनना, तीर तरकश से निकल जाना, क,ख,ग तक नहीं जानना, गलियों की धूल फांकना, नासिका के आगे कुछ दिखाई नहीं देना, दूध की मक्खी की तरह निकाल फेंकना, अचार डालना, रात-दिन एक करना, चोट खाए भुजंग की तरह फुफकारना, मुँह पर थुकना, मुँह तोड़ उत्तर देना, दाल नहीं गलना, आसन जमाकर बैठ जाना, छक्के छुड़ा देना, पत्थर पर तीर मारना, प्राणों को हथेली पर लिए चलना, आँख उठाकर देखना, पैरों के नीचे का

चट्टान बनना, झोली फैलाना, कुचला हुआ सर्प होना, सर्प के बिल में हाथ डालना, लहर की नौका बन जाना, नमक-मिर्च लगाना, अरण्य-रोदन सिद्ध होना, आँखों की किरकिरी बनना, सभी का एक नौका में बैठना, चेहरा काला पड़ जाना, दूर की कौड़ लाना, अन्धेरे में तीर नहीं मारना, पैर धरती पर नहीं आसमान में पड़ना, काल का शिकार बनना, जिह्वा तालू से सटना, रंग-रेलियाँ करना, अलख जगाना, संकट के बादल घिरना;[30] माँ के दूध को लजाना, सरदर्द बन जाना, मक्खी बराबर भी नहीं जानना, खाक बराबर भी नहीं समझना, चम्पत हो जाना, जान से हाथ धो बैठना, जान पर खेल जाना, दांत खट्टे कर देना, चेहरा सफेद होना, शेर के मुँह में हाथ डालना, हाथ-पैर ठण्डे होना, पैर के नीचे से धरती खिसक जाना, पूंछ दबाकर भागना, बगावत करना, पीठ पीछे बोलना, पानी पिलाना, नानी याद आ जाना, खून पीना, धूल में मिलाना, धूल में मिलाना, टोपी नहीं उछालना, सिर के बल दौड़ना, मौत के मुँह में झोंकना, कन्धे से कन्धा मिलाना, आग बबूला होना, राहत की सांस लेना, दिन में तारे नजर आना, दामन पर दाग लगना, एक सूत्र में पिरो देना, बाल की खाल निकालना;[31] तूल नहीं देना, पानी का बुलबुला सिद्ध होना, बिगुल फूँकना, हाय-तौबा करना, अंधी गलियों में झोंकना, गाज बनकर गिरना, सानी नहीं रखना, आव देखना न ताव, नाक का बाल होना, औंधे मुँह गिरना, छाती पर मूंग दलना, ऊँट का पहाड़ के नीचे आना, कथनी और करनी में अन्तर होना, पेट में कोई बात न पचना, हाथों के तोते उड़ जाना, मन के पुए पकाना, सौ बार सोचना, फूल की तरह हल्का हो जाना, छोटे मुँह बड़ी बात करना, तलवा चाटना, राह का कांटा बनना, आँसू के परनाले बहाना, हुक्मउदूली करना, धूल को सिर पर चढ़ाना, सिर पर तलवार लटकाना, पैर की धूल को सिर का तिलक बनाना, प्राणों की भीख मांगना, नाक रगड़ना, ढोल पीटना, धज्जियाँ उड़ाना, बेर को गुठली और गुठली को बेर समझना, बैठे-बैठे रोटियाँ तोड़ना, खरी-खोटी सुनाना, दो पाटों के बीच पीसना, आँखें खुल जाना, पानी को अंजुलि में बांधना, सिर हथेली पर रखना, पैर भटकना, सिर कुचल देना, चेहरे का रंग उड़ जाना, गला फाड़ना, सींग भिड़ाना, जीभ पर लगाम देना, साफ चादर पर कीचड़ उछालना, पानी पर लकीर खींचना, परमेश्वर के प्यारे हो जाना, चार दिनों की चांदनी होना, आपा खोना;[32] हाथ में चूड़ियाँ पड़ना, मन सातवें आसमान पर चढ़ना, भार अपने कंधों पर लेना, पीठ में छुरा भोंकना, गांठ बांधना, रेती फांकना, मन का चोर बाहर आना, चरणों की धूल के बराबर नहीं होना, चेहरा बेनकाब करना, राख में आग ढूंढना, आँखों का कांटा होना, आधे मन से करना, अक्षर-ज्ञान करा देना, कोल्हू का बैल बनना, घास छीलते रहना,

जीवन हथेली पर लेकर चलना, मन की मुराद मन में रह जाना, खिचड़ी पकाना, आन पर आंच नहीं आने देना, भीगी बिल्ली बन जाना, पैरों में पंख लग जानाक, प्रतिभा परवान पर चढ़ना, छाती दूनी होना, चिराग लेकर ढूंढना, सिर कुचला सांप बन आना, मन फुलकर कुप्पा हो आना, दिल का चैन और रात की नींद हराम होना, पैर डगमगाना, सीना तानकर खड़े होना, कड़वे घूंट की तरह पीना, चट्टान से सिर टकराना, कंधे से कंधा रगड़ना, आग में झोंकना;[33] मुँह चिढ़ाना, कांटे की तरह चुभना, डटकर मुकाबला करना, पानी की तरह बहाना, शतरंज की चाल में मोहरा बनाना, आगे पैर बढ़ाकर पीछे खींचना, दो टूक कहना, पैरों तले दबाना, रोब गालिब करना, दुर्बल नसों को पकड़ना, आँखों आँखें गड़ा देना, हाथ की कठपुतली बन जाना, मेढ़कों को तौलने के सदृश होना, अपना उल्लू सीधा करना, समय की नब्ज पहचानना, हवा का रुख पलटना, सितारा बुलंदी पर होना, गर्दिश का शिकार होना, पत्थर की लकीर होना, गाजर-मूली की तरह काटना, चिकनी-चुपड़ी बातों में आना, नीम से उतारकर बबूल पर पटकना, पका आम होना, डटे रहना, होश हवा हो जाना, बाज की तरह टूट पड़ना, पाँव के नीचे से धरती खिसक जाना, सिर को कलम कर देना, सुलगती आग में अपने हाथ जलाना, घास की तरह रौंद डालना, कदम फूँक-फूँककर रखना, पालतू बिल्ली बनाना, आँखों का तारा होना, हाथ साफ करना, गर्दन ऊँची कर चलना, कान भरना, दाल गलना, दामन झाड़कर खड़े होना, जूतियों की नोक पर उछालना, कमज़ोर नस पर उंगली रखना, दुम दबाकर भागना, जंगल की आग की तरह फैलना, धुन के पक्के होना, फूट डालना, कहर ढाना, संतोष की सांस लेना, खुदा के प्यारे हो जाना, कलेजे का कांटा दूर होना;[34] खार खाना, दिल को छलनी करना, इक्के के टट्टू की तरह होना, पाला पड़ना, एक कान से होकर दूसरे कान से निकल जाना, हुक्का-पानी बंद हो जाना, हालत पतली हो जाना, कछुए की तरह अपनी खोल में बंद रहना, हवाईमहल खड़े करना, पैर जमाना, कीचड़ नहीं उछालना, कानों पर जूं रेंगना, अग्नि को हवा मिल जाना, आग में कूदना, आकाश से तारे तोड़ना, आड़े हाथों लेना, घाव पर मलहम लगाना, मक्खियाँ मारना, उत्साह पर ठण्डा पानी फिर जाना, डेरा डालना, सिर पर कफन बांधना, पगड़ी उछालना, कानों में तेल डालकर सोना, रीद की हड्डी तोड़ देना, बिस्तर गोल करना, जीभ से पानी टपकना, हाशिए पर आ जाना, कोढ़ में खाज का काम करना, चुहों की तरह मुँह छिपाना, शब्दों को तौलकर लिखना आदि-आदि।[35]

कहावत/लोकोक्ति

भाषा विचारों और भावों को अभिव्यक्त करने का साधन है। हम अपनी बात को कभी सीधे-सादे ढंग से कहना चाहते हैं और कभी प्रभावशाली ढंग से। मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग उसे प्रभावशाली बनाने के लिए किया जाता है। मुहावरे और लोकोक्ति में अंतर यह है कि मुहावरा स्वतन्त्र नहीं होता और उसे वाक्य में पिरोकर रखना आवश्यक होता है। जबकि लोकोक्ति का स्वतंत्र प्रयोग होता है और उसमें एक पूर्ण विचार या सत्य की स्पष्ट एवं पूरी अभिव्यक्ति हो जाती है। जैसे - टेढ़ी खीर, आँख दिखाना आदि मुहावरे हैं तो एक पंथ दो काज एवं होनहार बिरवान के होते चिकने पात आदि लोकोक्तियाँ हैं। मुहावरा वाक्य के अर्थ में चमत्कार पैदा करता है जबकि लोकोक्ति चमत्कार पैदा करने के साथ ही किसी बात को पुष्ट भी करती है। एक और बात कि लोकोक्ति में मुहावरा या मुहावरे हो सकते हैं जबकि मुहावरे में लोकोक्ति नहीं समा सकती।

लोकोक्ति शब्द 'लोक+उक्ति' से मिलकर बना है। लोक की उक्ति। एक विश्वकोश में कहा गया है कि ''लोकोक्ति किसी सत्य अथवा किसी उपयोगी विचार को एक संक्षिप्त वाक्य में कहती है। इसके प्रयोग से भाषा में सरसता एवं चित्रात्मकता आ जाती है। इनका प्रयोग चिरकाल से अनेक व्यक्तियों द्वारा होता रहा हैऔर आज भी प्रसंगानुसार इसका प्रयोग होता है। जन सामान्य द्वारा ग्रहण किए जाने पर ही कोई उक्ति लोकोक्ति का रूप धारण करती है।''[36] लोकोक्ति को ही कहावत भी कहा जाता है, अर्थात् 'जो कहा जाए'। कहावतकोश के संपादकद्वय में से श्री विक्रमादित्य मिश्र प्रस्तावना में लिखते हैं - चूँकि ये सूत्रवाक्य (कहावत) जीवन के सार्वभौम सत्य, सुख-दुःख, जीवन-मरण, आचार-विचार, रीति-नीति, खान-पान, शकुन-अपशकुन, खेती-बारी, आहार-विहार, पशु-पक्षी, जीव-जन्तु आदि से सम्बद्ध हैं, इसीलिए ये सामान्य अथवा सर्वमान्य उक्तियों के रूप में प्रचलित हो गए और चूँकि ये उक्तियाँ यथावसर परस्पर कही-सुनी जाती रहीं, इसलिए लोकजीवन में 'कहावत' नाम से अभिहित किया गया''[37]

लोकोक्तियाँ या कहावतें उन्हें कहते हैं, जो पूरे वाक्य के समान होती हैं, और साधारण अर्थ को छोड़कर कोई विशेष अर्थ प्रकट करती हैं। जैसे अन्धों में काना राजा। इसका साधारण अर्थ तो यह है कि अन्धों में यह काना राजा के समान है। पर कहावत के रूप में इसका विशेष अर्थ है - मूर्खों में थोड़ा पढ़ा-लिखा बड़ा विद्वान समझा जाता है। यह (कहावत) वह अभिव्यक्ति है जिसमें जीवन के अनुभव के द्वारा संसार की किसी सच्चाई को प्रस्तुत किया जाता है। इसका प्रयोग किसी प्रसंग, घटना

या किसी बात का समर्थन करने के लिए किया जाता है। ऊपर हम बता चुके हैं कि यह स्वतंत्र रूप से प्रयोग की जाती है क्योंकि यह पूर्ण वाक्य होती है। कहावतों के प्रयोग से भाषा में सुन्दरता, सरसता और प्रभावपूर्णता आती है। कहावतों के प्रयोग से ही ज्ञात होता है कि लेखक को समाज-जीवन या लोक-जीवन का कितना गहरा ज्ञान है। डॉ. भगवतीशरण मिश्र ने अपने उपन्यासों में हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी की प्रचलित कहावतों का प्रयोग यथेष्ट ढंग से किया है। कहावतों के पुनरावर्तन को टाला गया है।

1. प्रथम ग्रासे मक्षिका पातः
2. पूरे कुएँ में भांग पड़ना।
3. थोथा चना बाजे घना।
4. कानी गैया का अलग बथान।
5. तीन कनौजिया तेरह चूल्हे।
6. अपनी-अपनी डफली अपना-अपना राग।
7. अधजल गगरी छलकत जाए।
8. जब नाचने लगे तो घूंघट क्या?
9. दाल-भात मे मूसलचन्द।
10. दूध का दूध पानी का पानी।
11. क्षमा बड़न को चाहिए छोटन को उत्पात।
12. साँप को दूध पिलाने से वह अमृत नहीं उगलेगा।
13. भगवान के घर देर है अंधेर नहीं।
14. कर भला तो हो भला।
15. रांड, सांड, सीढ़ी, संन्यासी, इनसे बचे तो सेवे काशी।
16. कहीं जूते का रखवाला कुत्ता हुआ है?
17. अंधा क्या चाहे, दो आंखें।
18. भेड़िये की खोल में मेमने।
19. संगत से गुण होत है संगत से गुण जात।[38]
20. उगते सूरज की सभी पूजा करते हैं। कौन पूछता है डूबते सूरज को?
21. जितने मुँह उतनी बातें।

22. सोने में सुगन्ध।

23. किताबी कीड़ा।

24. हाथ कंगन को आरसी क्या?

25. लकीर का फकीर।

26. यतो धर्मस्ततो जयः।

27. नथिंग इज़ बाई एक्सिडेंट।

28. आम के आम और गुठलियों के दाम।

29. डूबते को तिनके का सहारा।

30. हीरे की परख तो जौहरी को ही होती है।

31. चिकने घड़े पर पानी नहीं टिकने का।[39]

32. अति सर्वत्र वर्जयेत्।

33. फर्स्ट कम फर्स्ट।

34. सांप भी मरे और लाठी भी नहीं टूटे।

35. पत्थर पर तीर मारने से कोई लाभ नहीं।

36. बूढ़ा सुग्गा पोस नहीं मानता।

37. हर्रे लगे न फिटकिरी और रंग चोखा।

38. आ बैल मुझे मार।

39. जो बोया सो काटे।

40. तवे से उतरकर चूल्हे में गिरना।

41. लौटकर बुद्धु घर को आए।

42. बिन बुलाए मेहमान।

43. जहाँ शहद होगा, वहाँ मक्खियाँ दौड़ेगी ही।

44. जब नाक को सीधे नहीं छू पाए तो हाथ घुमाकर टेढ़े ही छुओ।[40]

45. एक से दो भले।

46. हर चमकनेवाली चीज सोना नहीं होती।

47. टूमौरो नैवर कम्स।

48. नक्कारखाने में तूती की आवाज।[41]

49. अब पछताने से क्या जब चिड़ियाँ खेत चुग गई।

50. निरस्त पादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते।
51. गूंगे के गुड़ का स्वाद तो गूंगा ही जाने।
52. क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया, दुर्गम पथस्तत कवयो वदन्ति।
53. बिल्ली के भाग्य से छींका टूटा।
54. जंगल में मोर नाचा, किसने देखा?
55. लोहे को लोहे से कटवाना आसान होता है।
56. हवन करते हाथ जलेगा।
57. छोटे मुँह बड़ी बात।
58. दीवारों के भी कान होते हैं।
59. बड़े मीन-मत्स छोटी मछलियों को निगल जाते हैं।
60. शुभस्य शीघ्रम्।
61. दूध का जला छाछ भी फूँक-फूँककर पीता है।
62. न रहेगा बांस न बजेगी बाँसुरी।
63. सर्प काटने से गया तो फुफकारने से भी रहा?
64. दीपक तले ही अंधकार होता है।
65. दुग्ध पीने से सर्प अमृत नहीं उगलता।
66. कुड़की तेरा कोटरा नौ खूंटी की नाक।
67. दीप से दीप जलेगा।
68. शेर जब तक जीवित रहता है स्वयं आखेट करता है।
69. पीलिया-ग्रस्त आँखों को सब कुछ पीत ही दृष्टिगोचर होता है।[42]
70. बावन तोले पाव रत्ती।
71. बड़े मियाँ तोबड़े मियाँ, छोटे मियाँ सुभान अल्लाह।
72. यतो धर्मस्ततो जयः।
73. शेर सेर तो बच्चा सवा सेर।
74. बिल्ली के गले में घंटी बांधेगा कौन?
75. हाथी, घोड़े बह जाएँ, गधा कहे कितना पानी।
76. बकरे की माँ कब तक खैर मनाएगी?
77. न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी।

78. जान बची लाखों पाये।

79. मियाँ की जूती मियाँ के सिर।[43]

80. खुदा देता है तो छप्पर फाड़कर।

81. चुल्लू भर पानी में डूब मरना।

82. देर आए दुरुस्त आए।

83. तरबूजा देखकर तरबूज रंग लाता है।

84. घी का बना लड्डू टेढा भी हो तो अच्छा।

85. खोदा पहाड़ भी तो निकली बस चुहिया।

86. मेरी बिल्ली और मुझी से म्याऊँ?

87. घिसा सिक्का।

88. जो डरता है वही मरता है।

89. ताली कभी एक हाथ से बजती है?

90. जो बोओगे वही तो काटोगे।

91. मरे हुए को क्या मारना?

92. एक मछली किस तरह सारे तालाब को गंदा करती है।[44]

93. स्वदेशे पूज्यते राजा, विद्वान सर्वत्र पूज्यते।

94. कांटे से ही कांटा निकलता है।

95. होनहार बिरवान के होत चिकने पात।

96. एक तो करेला तीता दूजे नीम चढ़ा।

97. झूठ के टांगे नहीं होतीं।

98. शनैः पंथा, शनैः कंथा, शनैः पर्वत लंघनम्।

99. जली हुई रस्सी की ऐंठन।

100. हंसो के झुंड में बगला।

101. मूल से ब्याज अधिक प्रिय होता है।

102. फूल जहाँ खिलेंगे भौरें वहीं मंडराएँगे।

103. साँप को लाख दूध पिलाओ वह काटने से बाज आएगा क्या?[45]

104. यह हाथी के दांत के सिवा कुछ नहीं था - खाने के और, दिखाने के और।

105. सांप-नेवले की लड़ाई।

106. डूबते जलयान से सबसे पहले चूहे भागते हैं।

107. अकेला चना कौन-सा भांड फोड़ लेगा?

108. सिर मुड़ाते ओले पड़े।

109. खेत खाए गद्दा, मार खाए जुलहा।

110. घर की मुर्गी दाल बराबर।

111. साँप से अधिक सपोले खतरनाक होते हैं।

112. जान है तो जहान है।

113. बेटी पराया धन होती है।[46]

114. एव्री सेन्ट हैज़ ए पास्ट ऐंड एव्री सिनर हैज़ ए फ्यूचर। (हर संत का (संदिग्ध) भूतकाल होता है और हर पापकर्मी का (उज्जवल) भविष्य होता है।

115. बिना मांगा वरदान।

116. अन्त भला तो सब भला।

117. एक पंथ दो काज।

118. टू किल टू बर्ड्स विथ वन स्टोन (एक पत्थर से दो पक्षियों का शिकार)।

119. एक अनार सौ बीमार।

120. ढाक के तीन पात।

121. कमिंग इवेंट्स कास्ट देयर शैडोज़ बिफोर - (आ रही घटनाएँ अपनी छाया पहले ही फैला देती हैं।)

122. नेवर गिव अप।[47]

123. जैसा अन्न वैसा मन।

124. बत्तीस दांतों के बीच जीभ।

125. मरता क्या न करता।[48]

126. विनाशकाले विपरीत बुद्धि।[49]

127. व्होट इज़ देर इन ए नैम (नाम में क्या रखा है?)।[50]

कहावतों का नवीन ढंग से प्रयोग :

भाषा निरंतर विकसित होती रहती है और जब नई सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक गतिविधियाँ सामने आती हैं तो कुछ नई कहावतों का जन्म भी हो जाता है।

जैसे डॉ. श्री लाल शुक्ल ने बड़े आदमी की बातें बड़ी होती है उस सन्दर्भ में नई कहावत का प्रयोग किया है - 'हाथी का लींड बी क्विन्टल का होता है।' डॉ. मिश्र के उपन्यासों में भी कहीं-कहीं भाषागत चमत्कार की सृष्टि के लिए ऐसी नई कहावतों का प्रयोग हुआ है। जैसे-बबूल का पेड़ क्या बुढ़ापे में काँटे आना छोड़ देता है? मिश्रजी की भाषा शैली की एक विशिष्टता यह दृष्टिगोचर होती है कि कहीं पर वे प्रचलित कहावत को तोड़-मरोड़कर प्रस्तुत करते हैं। 'न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी' इस प्रचलित कहावत का उन्होंने नई तरह से प्रयोग किया है - 'बांस ही नहीं रहेगा, तुम बांसुरी का राग ढूंढते रहना' ऐसी तो अनेक कहावतें हमें उनके उपन्यास में प्राप्त होती हैं। कुछ अनुदित कहावतों का प्रयोग भी मिलता है। यहाँ पर हम कुछ ऐसी कहावतों को प्रस्तुत कर रहे हैं। यथा -

1. अब घोड़ों के दिन लद गए हैं और गधों के पौ बारह हैं।
2. कोयले की दलाली मे काले हाथ तो हाथ कभी-कभी मुँह भी काला हो जाता है।[51]
3. कमल के पत्ते और हाथी की पीठ पर पानी की बूँद कहाँ टिक पाती हैं?
4. कारवां गुजर गया गुब्बार देखते रहे।
5. एक ओर खाई और एक ओर पर्वत।
6. नागिन जो अपने ही अंडों को खाने में नहीं चूकती।
7. जैसी प्रजा वैसी सरकार।
8. एक तरफ खंदक तो एक तरफ खाई।[52]
9. एक ओर पहाड़ तो दूसरी तरफ खाई।
10. आँख में दर्द हो तो आँख को ही फोड़ दिया जाए।
11. प्रेम वह मन्यान है जिसमें एक से अधिक तलवारें नहीं रह सकतीं।
12. हवन करनेवाले के भी हाथ तो सुगंधित हो ही आते हैं।
13. हर सफल व्यक्ति के पीछे कोई नारी अवश्य होती है।
14. मनुष्य केवल रोटी के सहारे जीवित नहीं रह सकता - मैन कांट लिव बाई ब्रेड एलोन।[53]
15. स्वर्ण-कमल मानसरोवर में ही खिलते हैं।
16. जिन खोया तिन पाइयां गहरे पानी पैठ।
17. अर्द्ध रात्रि में तेल जलाना। (टू बर्न मिड नाइट ऑयल)

18. व्याघ्र, व्यार्घ ही रहेगा और अजा (बकरी) अजा ही रहेगी।

19. जैसे उड़ि जहाज का पंछी पुनि जहाज पर आवै।

20. आधा भरा हुआ जलपात्र छलकता जाता है।

21. साँप भी मरे और लाठी भी सुरक्षित रहे।

22. दूर के वाद्य सुहावने होते हैं।

23. प्रत्यक्ष, प्रमाण का मुखापेक्षी कब रहा?

24. ठंडा लोहा ही गर्म लोहे को काट सकता है।

25. भैंस से गौ का काम नहीं लिया जा सकता।

26. जिस डाली को बैठने के लिए देते हो, उसे ही काट डालते हो।

27. जो जैसा कर्म करेगा, वैसा ही फल पायेगा।

28. दन्तहीन हो चले सर्प के दांतों को और सबल कर दिया।

29. करेले को नीम चढ़ाना था और वह चढ़ चुका था।

30. घर मे सर्प पालोगे तो उसके दंश से कब तक बचोगे?

31. इत्र छिड़क देने से मल की दुर्गन्धि समाप्त भले ही हो जाय वह खाद्य नहीं हो जाता।

32. बहता पानी और चलता संत ही अच्छा।

33. सुबह के भूले को तुमने शाम में घर बुला ही लिया।

34. जिस लोमड़ी की पूँछ कट जाय वह औरों की पूँछ कैसे देख सकती है?

35. दुग्ध पीने से सर्प अमृत नहीं उगलता!

36. टूटा हुआ शीशा और टूटे हुए दिल नहीं जुड़ा करते।[54]

37. सीधी उंगली से घी निकल भी कहाँ पाता है?

38. साँप के निकलने के बाद लकीर पीटने से क्या होता है?[55]

39. बबूल का पेड़ क्या बुढ़ापे में काँटे उगाना छोड़ देता है।

40. नीम के पेड़ में आम का फल लगते देखा है?

41. भेड़ दूध भी देगी तो कितना।

42. कुआं खोदो और पानी पीओ।

43. जीभ से निकल गई बात और तरकश से निकल गए तीर को कब वापस आना है?

44. किसी कंजूस को बुढ़ापे में उदार होते देखा है, किसी जल्लाद को संत होते?

45. बांस ही नहीं रहेगा, तुम बांसुरी का राग ढूंढते रहना।

46. अब तक गंगा में बहुत पानी बह चुका है।[56]

47. जब कठौती में गंगा हो (या यमुना) तो उसके तीर जाने की क्या आवश्यकता है।

48. बरगद के पेड़ के नीचे कोई और पेड़ फल-फूल नहीं पाता।

49. जिस सर्प में जितना अधिक विष होता है, वह उतना ही शीघ्र फन फैला उठता है।[57]

50. सर्प को दूध पिलाने से वह विष-वमन छोड़ नहीं देता।

51. एक सरकंडा बड़ी आसानी से टूट जाता है।

52. चिनगारी एक दिन शोला भी बन सकती है।

53. दुर्दिन में अपनी छाया भी साथ छोड़ देती है।

54. सर्प एक बिल छोड़कर जाएगा दूसरे में बस जाएगा।

55. विपत्ति अकेले नहीं आती।

56. सौ की लकड़ी एक का बोझ।[58]

57. पत्थर को पसीजते कब और किसने देखा है?

58. समय जा चूका आदमी और डाल का चूका बन्दर नहीं बचता।

59. कौन कहता है कि होनहार बिरवान के 'पात' चिकने होते हैं?

60. एक तरफ खाई तो दूसरी तरफ समुद्र।[59]

61. दीपक तले का अंधेरा दीपक को कहाँ दिखाई पड़ता है।

62. सुबह का भूला शाम को घर आ गया था।

63. प्रकाश और अंधकार का साथ होना कैसे संभव है कहीं?

64. हित की बातें भाग्यहीनों को कब अच्छी लगती है?[60]

65. न रहेगा विष-वृक्ष न लगेगा उसमें विष-फल।

66. किसी ने किसी पक्षी को 'अण्डा' सेते देखा है?

67. पूत के पाँव पालने में ही देखे जाते हैं।

68. यमुना मैया में दो गागर पानी अधिक दो गागर कम।

69. काँटे को कलेजे में बहुत देर तक पाल नहीं सकता।

70. खंजर सोने का भी हो तो उसे दिल के अन्दर स्थान नहीं दिया जा सकता।

71. जल में डूबते को तिनके का नहीं नौके का सहारा मिल जाय तो उसके जल-

भीगे मुख की आभा देखी है किसी ने?

72. वन-अश्व के मुख में वल्गा डालना।

73. जो गुड़ देने से ही मर जाये उसे विष देने की क्या आवश्यकता है?[61]

74. ठंडा लौह ही तप्त लोह-पिंड को काटता है।

75. अग्नि को धूम्र से पृथक् कर देख सकते हो क्या?

76. कहीं कौए की चोंच से पका हुआ बिल्व-फल फूटता है?[62]

सांगरूपक

रूपक एक सादृश्यमूलक अलंकार है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों का प्रयोग केवल पद्य में ही होता है ऐसा नहीं है, कई बार गद्यकार भी इन अलंकारों का प्रयोग बहुत सहज रूप से करते हैं। जब हम कहते हैं कि यह जीवन-सागर बड़ा विचित्र है, तो जाने-अनजाने हम रूपक अलंकार का प्रयोग करते हैं। रूपक के जो अनेक भेद हैं उसमें एक भेद सांगरूपक भी है। जब रूपक का प्रयोग उसके अंग-उपांगों के साथ किया जाए तो इसे सांगरूपक कहते हैं - स+अंग=सांग। निम्नलिखित उदाहरण देखिए-

आतम की चिड़िया कहीं सपनों का आकाश।
नीड़ बसाया नेह से तिनके-तिनके सांस।

यहाँ 'आत्मा रूपी चिड़िया' में रूपक है। आकाश, नीड़ तथा तिनके ये सारे शब्द चिड़िया से जुड़े हुए हैं। अतः उपर्युक्त उदाहरण में सांगरूपक अलंकार का प्रयोग हुआ है ऐसा हम कह सकते हैं। हम अनेक बार कह चुके हैं कि डॉ. मिश्र के गद्य में अनेक स्थानों पर काव्यात्मकता के गुण उपलब्ध होते हैं। यहाँ हमने डॉ. मिश्र के उपन्यासों से सांगरूपक अलंकार के कुछ उदाहरण निकाले हैं। यथा-

1. स्मृतियों के धागों के सहारे चिन्तन की पतंग मन के अछोर आकाश में उड़ती चली जा रही है।

2. चिन्तन की एक नन्हीं लहर उनके मन के असीम सागर पर आती नहीं कि उससे भी बड़ी कोई लहर उसे दबोच बैठती। चिन्तन-ऊर्मियों का यह बनना-बिगड़ना चल ही रहा था।

3. उसके अवसान के पश्चात् उसकी कीर्ति-किरणों का विजय-नर्तन वर्तमान रहेगा।

4. अज्ञान के अंधकार पर ज्ञान के प्रकाश की विजय स्वतः ही स्थापित हो जाती है।
5. अपने मन के क्षुद्र तड़ाग में उन दिनों कभी-कभी उठनेवाली भक्ति-भाव की क्षणस्थायी लहरों का क्या महत्व था?
6. आवश्यकता केवल इतनी है कि मातृ-प्रेम की समाधि पर कृष्ण-प्रेम की अट्टालिका खड़ी कर दी जाय।
7. आज राजपूताने के आसमान पर प्रलय के मेघ छा रहे हैं।
8. उसके अन्दर सुख-शान्ति की चपल ऊर्मियाँ किल्लोल-रत हो आई। लगा उसके जीवन-आकाश के सारे भयावने मेघ छंट गए और वह असंख्य इन्द्रधनुषों से युक्त हो गया। ग्रीष्म की लू-लपटों में झुलसा उसके हृदय का पुष्पोद्यान वासंती हवा के थपेड़ों से लहरा आया। उसके मन के सलिल-विस्तार पर अनगिनत सरसिज सज आए।
9. मीरा रूपी एक असमय मुरझाती मालती-लता की जड़ों में स्नेह की कुछ सलिल-बूंदें डालकर उसे जीवन-दान तो दिया ही जा सकता था।
10. अब तक जितना किया उतना कम था क्या कि महाराणा रूपी वट-वृक्ष की स्नेह-छाया से भी मुझे वंचित कर दिया।
11. उनके मन में अपमान की दारूण-ज्वाला इतने दिनों से जल रही थी उसे कामिनी की योजना की सफलता के शीतल जल ने सदा के लिए शान्त कर दिया था।
12. इसी तरह दुःख के अनन्त सागर में सुख के एक-दो द्वीप कहीं-कहीं सिर उठाए खड़े हैं; उन्हीं को अपना सम्बल बना इस जीवन-यात्रा को काट लो तो काट लो वर्ना यह पूरा जीवन एक दीर्घ दुःस्वप्न तो है ही।
13. कल उसके जीवन-सर में एक कनक-कमल जो खिलनेवाला था।
14. उनके हृदय से अनास्था और अधर्म के तमस को बाहर कर वहाँ आस्था और अध्यात्म की स्थापना के लिए।
15. उसके विशाल गढ़रूपी चन्द्रमा पर मीरा रूपी ग्रहण अब समाप्ति पर था।[63]
16. क्या अफजल रूपी राहु सचमुच ही मराठों के शौर्य-सूर्य को निगलकर ही दम लेगा?
17. जब कोई मराठा-सिंह इन यवन-श्रृगालों का शमन-दूत बन हमारी हिम्मत को बल दे।

18. सदाचार की शाखा पर ही पुण्य का फल लगता है।

19. शिवाजी अब अपनी भावनाओं की बाढ़ को नहीं रोक सके उनके संयम का बांध टूट गया।[64]

20. विष रूपी नारी से अमृत रूपी पुरुष कैसे पैदा हो गया।

21. आग की आंच पर ही तो घी पिघलता है। काम की आंच लगी तो भक्ति-भावरूपी घृत बहकर हृदय से बाहर हो गया।

22. विश्वास की पुख्ता नींव पर निर्मित गार्हस्थ्य की अट्टालिका, साधना घर, उपासना-गृह की तरह ही काम करती है।

23. दिल में उठ रही भावनाओं की उफान पर संयम का ठंडा जल छिड़का।

24. सुख के मेघ पूरी तरह बरस भी नहीं पाए थे कि दु:ख की घटाएँ घिर आईं।

25. आहलाद् का उत्साह समाप्त भी नहीं हुआ था कि अवसाद का अनुत्साह उपस्थित हो गया।[65]

26. उन्होंने मन में उठी इस बलवती इच्छारूपी सर्प के फन पर अपने संकल्प का दृढ़ चट्टान पटक उसे निर्ममता से कुचल दिया।

27. आशंका, निराशा और कल्पित-अकल्पित असफलता के अन्धकार के गर्भ से गन्तव्य-प्राप्ति की सुनहली किरणें जब सहसा प्रकट हो उठती हैं तो श्रम और अध्यवसाय स्वतः सार्थक सिद्ध हो आते हैं।

28. जहाँ कहीं सौंदर्य का, साहस का, पवित्रता का फूल खिलेगा, मन-रूपी भ्रमर उस पर मंडरायेगा ही।

29. उनके मन-सागर की प्रसन्नता की, आह्लाद की लहरों का नर्तन आरम्भ हो गया।

30. पुरातन की नींव पर अधुनातन की आधारशिला रखनेवाले के लिए दोनों का ज्ञान तो आवश्यक है।

31. कल्पित उपेक्षा-वृक्ष का सहारा ले गोविन्द की प्रतिभा-वल्लरी परवान चढ़ी।

32. उन्हें सिक्ख धर्म के आसमान में विपत्तियों के बादल स्पष्ट मंडराते नजर आ रहे थे।[66]

33. सिक्खों को भाग्याकाश के पूर्वी क्षितिज पर गोविन्द-रूपी सूर्य का उदय इस भयावह तम, इस गहन अंधकार को समाप्त कर पंथ के पथ को आलोकित करने को प्रस्तुत था।

34. सिक्खों ने किस तरह इन विद्रोही राजाओं के विद्रोह की आग में अपनी सहायता और हमदर्दी का घी डाला था इसका उसे पता था।

35. संकट के घनघोर काले मेघों ने उनके जीवन के भाग्याकाश को पूर्णतया मंडित कर छोड़ा था।[67]

36. उनके मुख रूपी अंगार पर जमी चिन्ता-राख सहसा उड़ गई थी।

37. यदि बाहर-भीतर दोनों को प्रकाशित देखना चाहते हो तो जीभ रूपी द्वार पर राम-नाम का मणि-द्वीप रखो।

38. जीवन एक स्वच्छ सरित-प्रवाह है, उसमें भगवद् भक्ति और परोपकार के अनमोल पद्म-पुष्प विकसित पड़े हैं। सुख के असंख्य द्वीप विकीर्ण हैं इसमें प्रसन्नता एवं हर्षोल्लास के अनेक चटुल मीन-मत्स्य क्रीड़ारत हैं इसमें।[68]

39. मन के आकाश पर छाया भय का अन्धकार आश्वासन के इस प्रकाश से पूरी तरह छँट गया।

40. अपमान की धधकती अग्नि पर स्नेह की चन्द सलिल बूंदें पड़ी तो उसका मन कुछ शान्त हुआ।

41. उसके मन के समुद्र में भावनाओं के ज्वार ने भीषण ताण्डव आरम्भ कर दिया था।

42. इस मधुर मुलाकात के आँचल में कटु स्मृतियों के कांटे नहीं डालना चाहता।

43. प्रजा की इस क्रोधाग्नि में ही आपके पिता की मिथ्या हत्या के संवाद का घृत डाल लोगों ने उसे और भड़का दिया है।[69]

44. वैधव्यग्रस्त जीवन के क्षितिज पर प्रसन्नता और उल्लास की लालिमा को कभी भूलकर भी छिटकना नहीं था।

45. प्रेम, स्नेह और वात्सल्य की जो बाढ़ इस वृद्ध पिता को धार के विवश तिनके की तरह बहा रही थी, उसके समक्ष उनके पांडित्य और ज्ञान का जलयान भी अनुपयोगी और व्यर्थ था।

46. सत्य की आग को अविश्वास और संशय की राख कब तक ढंक सकती थी?

47. आज उसके प्राणों की नीड़ से प्रसन्नता के विहग अकस्मात् किधर उड़ गए?

48. उनकी स्मृति पर अगर विस्मरण की कोई पतली परत पड़ भी आई हो तो सुदामा के नाम का पवन क्या पर्याप्त नहीं था उसे उड़ा फेंकने को?

49. आकांक्षा के ऊँचे आकाश में उड़ान भरते उसके मन के पखेरू बात की बात मे समय रूपी बहेलिये के बाणों से विद्ध होकर पृथ्वी पर आ गिरते हैं।

50. सम्भावनाओं की इंट-इंट चुनी उनकी आशा-अट्टालिका बात की बात में सिकता निर्मित दीवारों की तरह धराशायी हो गई।

51. कौरवों के सैन्य रूपी सागर को अर्जुन के शौर्य और धैर्य के जलयान से ही तो पार करना था पांडवों को।

52. सामान्य जनों को अक्सर ग्रसित करनेवाली सफलता-असफलता, सिद्धि-असिद्धि चिन्ता रूपी आधि से भी मुक्त कर उसके समक्ष एक स्वस्थ जीवन-दर्शन का राजपथी भी उन्होंने प्रशस्त कर दिया था।

53. तो यही बात इस शरीर रूपी क्षेत्र के साथ भी है। साधना के द्वारा इसका कर्षण करो। ईर्ष्या, द्वैष, घृणा, क्रोध, लोभ,परिग्रह आदि की तरह के घास-फूस और झाड़-झंखाड़ को निकाल फेंको तो इससे भी अच्छी फसल होगी। तब तुम्हारे संकल्पों का बीज शीघ्र अंकुरित और पल्लवित-पुष्पित होगा। तब तुम सत्कर्म की खेती करोगे और उसका फल भी अच्छा पाओगे। अच्छी तरह गोड़े गए खेत में कोई विष-बेल नहीं बोता, उसी तरह अच्छी तरह संस्कारित मन-मस्तिष्कवाले खेत में कोई कुकर्म की खेती नहीं करता।[70]

54. अभी तो समझ गए पर दो घंटे के बाद ही किसी तार्किक के गर्म तवे पर तुम्हारी आस्था की बूंदे तत्काल स्वाहा हो जाएंगी।

55. वहाँ प्रज्वलित करेंगे साधना की वह ज्वाला जो इस इलाके के सभी गाँवों से अज्ञान और अन्धविश्वास के अंधकार को समाप्त कर आत्मविश्वास और स्वावलम्बन का प्रकाश फैलाएगी।

56. अज्ञान और अनास्था के घोर मरू के मध्य ज्ञान और आस्था की आशाप्रद ओयसिस-घोर अंधकार में भटकती इस क्षेत्र की मूक मानवता के पथ को प्रकाशित करता ज्ञान और विश्वास का सबल प्रकाश-स्तम्भ।[71]

57. वह उसकी आश्वस्ति, विश्वास और आशा के सुकोमल पुष्पों पर आशंका और अविश्वास की चट्टान नहीं पटकना चाहती थी।

58. अपने अन्दर प्रतिभा के बिरवे को सूखने से बचाना है तो किसी आत्मीय के स्नेह-जल से उसे सींचना भी सीखो।[72]

अन्य अलंकार

डॉ. भगवतीशरण मिश्र के उपन्यासों की भाषा में अनेक स्थलों पर काव्य-का-सा लालित्य एवं माधुर्य है, तथा अलंकारों का पर्याप्त मात्रा मे प्रयोग होते हुए भी

ऐसा अवसर नहीं आया है कि भाषा-सुकुमारी की लंक लच जाए। डॉ. मिश्र ने उपन्यासों में उपमा, उत्प्रेक्षा, मानवीकरण जैसे अलंकारों का प्रयोग आरोपित न होकर सहज-स्वाभाविक ढंग से हुआ है। उपमा अलंकार का जिक्र 'उपमान' के अन्तर्गत हो ही चुका है, अतः यहाँ पर हम बहुत ही संक्षेप में कुछेक उपन्यासों से कतिपय उदाहरणों को उद्धृत कर रहे हैं।

उपमा के अनेक भेदोपभेदों में एक भेद मालोपमा भी होता है। मालोपमा अलंकार में उपमाओं की माला-सी चलती है। डॉ. मिश्र के ऐतिहासिक और पौराणिक उपन्यासों में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं। किन्तु यहाँ दो-तीन उदाहरण प्रस्तुत हैं।

01. किसी ने पिंजड़े मे कैद शेर की हालत देखी है? व्यग्रता और आक्रोश में एक सिरे से दूसरे सिरे तक पागल-सा चक्कर काटते? अथवा किसी ने पिटारी में बन्द सर्प की स्थिति देखी है, आवरण हटते ही फुफकारकर, क्षत्र फैलाकर बाहर निकलने की बार-बार की उसकी व्यग्रता? अथवा किसी ने गहरे सरोवर में जा पड़े किसी मस्त वृषभ को, बाहर निकलने का मार्ग न मिलने पर बार-बार बेचैनी से हर किनारे को खुरों से रौंद देने और विवश हो पुनः किनारों के चक्कर में लीन होने के करुण दृश्य को देखा है किसी ने अपनी आँखों से? ठीक यही स्थिति हो रही थी कंस की।[73]

02. प्रकृति और क्या? स्वभावजन्य दुष्टता। सर्प क्यों किसी को दंशित करता है। बिच्छू क्यों किसी को डंक मारता है? शाखामृग (वानर) फलों को खाता है सो जाता है, शाखाओं को भी क्यों नष्ट करता है? संसार-भर की सरिताओं के मीठे जल को अपने अन्दर समेटकर भी सागर क्यों हमें खारा, अपेय जल प्रदान करता है?[74]

03. मन प्रतिपल रंग बदलता है जैसे वसन्त के फूल खिलते और झड़ जाते हैं। जैसे पतझड़ के पत्ते पीत्त होते, सड़ते और नए रूप रंग में निखर आते हैं। जैसे सागर की ऊर्मियाँ अपनी मौज में समुद्रवक्ष पर उठती हैं और फिर उसी पर गिर जाती हैं, फिर बनती हैं, फिर बिगड़ती जाती है।[75]

डॉ. मिश्र के उपन्यासों में उत्प्रेक्षा अलंकार के भी बहुत-से उदाहरण मिल जाते हैं। उत्प्रेक्षा का कोशगत अर्थ है - अनुमान, अटकल, तुलना या उपेक्षा। जहाँ एक वस्तु में दूसरी वस्तु की संभावना बतायी जाती है वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता है। डॉ. मिश्र के पौराणिक और कुछ ऐतिहासिक उपन्यासों में तो उत्प्रेक्षा की झड़ी-सी लग

जाती है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं। यथा-

01. पर्दा खिंचा तो मंच पर जैसे साक्षात् सौन्दर्य की देवी विराजमान हों। उस दुग्धवर्णी युवती का सम्पूर्ण शरीर ही जैसे श्वेत पुष्पों से निर्मित हो।

02. दाड़िम के दानों-सी उनकी दंत-पंक्तियाँ चमक आईं और एक क्षण को लगा कि वहाँ सफेद चांदनी ही बिखर गई हो।[76]

03. गुरू तेगबहादुर का मन इन बातों को सुनकर प्रसन्नता से पूरित हो आया, जैसे इन दोनों ने उनके कान में शब्द नहीं डाले हों, खालिस अमृत की वर्षा की हो।

04. सुंदरी के चेहरे पर जैसे पश्चिमी क्षितिज की लालिमा ही एक क्षण को उतर आई। सतलज के जल में घुल रहा गुलाल ही एक पल को जैसे उसके मक्खन से चिकने गालों पर पुत गया।[77]

05. चक्कर-सा आने लगा। लगा कुम्भकार के चक्र (चाक) की तरह समूची अदालत घूम रही है।

06. तरंगायित समुद्र मानो अपनी ऊँची-ऊँची लहरों से आकाश-स्पर्श को आकुल हो आया।

07. सभा स्थल जैसे सागर बन गया था।

08. बारडोली आश्रम जैसे अशान्त लहरों से तरंगायित एक सागर में ही बदल गया। [78]

09. बा के लिए मिला बहुमूल्य हार तो सर्प बनकर मानो उनके गले से लिपट गया था।

10. इस ऋतु में कास के सफेद फूल सर्वत्र इस तरह बिखरे हैं कि लगता है वर्षाऋतु ने अपने बुढ़ापे को प्रकट कर दिया।

11. मैंने सती सीता के मुख को पुनः गौर से देखा - वह ऐसा लगा, जैसे कृष्ण मेघों से घिर आया चन्द्रबिम्ब।[79]

12. वनस्पति से ढकी इन पहाड़ियों पर कभी जब बादल उतर आते तो लगता हाथों को फैलाया नहीं कि छू गए।

13. श्वेत चमर की चांदी जड़ित मूठ को पकड़कर पुजारी और धीरे-धीरे हवा करने लगा श्रृंगारित शिवलिंग पर जैसे आरती की प्रज्वलित अग्नि शिखाओं की आँच से त्राण दिलाने का उपक्रम हो।[80]

14. उसके मुँह से घोर चीत्कार निकला जैसे किसी ने उसके अन्तर को किसी तीक्ष्ण अस्त्र से विद्ध कर दिया हो।

15. मीरा के चेहरे पर एक उदास मुस्कान खेली, जैसे कुहासे भरी चांदनी ।

16. मुख का एक-एक व्रण जैसे पारिजात पुष्प बनकर खिल आया।

17. पैर मन-मन भर के हो रहे थे जैसे किसी गजराज के पैर हों।[81]

डॉ. मिश्र के उपन्यासों में मानवीकरण अलंकार का प्रयोग भी कहीं-कहीं मिल जाता है। जहाँ अमूर्त भावों या जड़ पदार्थों तथा प्रकृति के पदार्थों में चेतना का आरोप करके उन्हें मानव के समान चित्रित किया जाय वहाँ मानवीकरण अलंकार होता है। यहाँ पर डॉ. मिश्र के कुछेक उपन्यासों से कतिपय उदाहरण दिये गए हैं। यथा-

01. रात्रि के उस अन्धकार को दीपों की जगमगाती ज्योतियों ने पी लिया था।

02. यत्र-तत्र खड़े दीपाधारों के ऊपर जलते दीपों का प्रकाश मंडप को एक सौम्य-शीतल प्रकाश में नहला गया।[82]

03. आज उसे पहले-पहल लगा कि पूरबी क्षितिज की यह अरुणिमा गुलाल की लालिमा संजोये हुए है और कोई कोमल हाथ धीरे-धीरे उसे उसके कपोलों पर मलता जा रहा है।[83]

04. दिशाएँ तो पश्चिम में छिप चुके उस थके-हारे राही, रश्मिपुंज सविता के अवसान के पश्चात् भी अभी तक बहुत हद तक आलोकित थीं।

05. उसकी (सूर्य की) अन्तिम किन्तु सुनहली किरणें कुरुक्षेत्र के मैदान में एकत्रित सभी वीरों पर जैसे गुलाल-सा छिड़क गई।[84]

06. बरामदे की छत से लटकते घंटे को बाबा ने जोर से डुलाया तो टन-टन की आवाज नीरव वातावरण में दूर-दूर तक तैर गई। अब तक यह आवाज मुहल्ले के बड़े बूढ़े और बच्चों के कानों को छूकर आरती के समय का संकेत दे चुकी होगी।

07. शाम अब, धीरे-धीरे अगल-बगल के खेतों और पोखर-तालाबों पर उतरी आ रही थी।[85]

08. अंधकार के अनेक चकते लंबे बरामदे में जहाँ तहाँ पसरे पड़े थे।[86]

09. ऊपर अपनी मस्ती में मचलता चाँद आकाश की ऊँचाईयों को मापता, नीचे उसकी चांदनी इस तालाब के जल को मथती रहती।

10. उषा ने प्रतिदिन की तरह पूरबी क्षितिज पर अपनी तूलिका से रंग बिखेरा और वह गुलाबी हो आया।[87]

सूक्तियाँ

'सूक्ति' शब्द 'सु+उक्ति' के योग से बना है। इसमे 'सू' उपसर्ग का प्रयोग हुआ है जिसका अर्थ होगा सुन्दर, शुभ इत्यादि। उक्ति का अर्थ है कथन। इस प्रकार 'सूक्ति' उसे कहा जाएगा जिसमें कोई अच्छी बात, कोई कल्याणकारी बात, कोई जीवनोपयोगी बात कही गई हो। कई बार कुछ कहावतों का उपयोग भी सूक्ति के रूप में होता है। कई बार कुछ कवियों के कथन सूक्ति का रूप धारण कर लेते हैं। कबीर, तुलसी, रहीम, बिहारी आदि कवियों के कई दोहे ऐसे हैं जिनका प्रयोग सूक्ति के रूप में आज धड़ल्ले से हो रहा है। पुराने कवि और लेखक की उक्तियाँ ही 'सूक्ति' कहलाती है ऐसा नहीं है। कई बार आधुनिक लेखकों में भी प्रसंगानुसार कुछ सूक्तियाँ अनायास फूट पड़ती हैं। निर्मल वर्मा के 'वे दिन' उपन्यास में एक स्थान पर कहा गया है - वे लोग ज्यादा सुखी नहीं होते जिनके सामने कोई दूसरा रास्ता खुला होता है। जैनेन्द्र के 'मुक्तिबोध' उपन्यास में एक स्थान पर कहा गया है - पुरुष हमेशा किसी सपने को चाहता है, और स्त्री उस सपनेवाले पुरुष को चाहती है। उपर्युक्त दोनों उद्धरणों में बहुत ही सहज और अनायास ढंग से 'सूक्ति कथन' हो गया है। जैनेन्द्र तथा प्रेमचन्द जैसे लेखकों में ऐसे सूक्ति-कथन बहुतायत में मिलते हैं।

जिस प्रकार डॉ. मिश्र के उपन्यासों में अवसरानुकूल मुहावरे और लोकोक्तियों का बहुतायत से प्रयोग हुआ है उसी प्रकार जीवन-मर्म को उद्घाटित करनेवाली सूक्तियाँ भी सहजतया प्राप्त होती हैं। इन तीनों के प्रयोग से उनकी भाषा-शक्ति की सहज बोधगम्यता, चित्रोपमता, प्रवाहमयता और स्वाभाविक अलंकृति आदि गुण सोने में सुहागे का कार्य करते हैं। उनके उपन्यासों में संस्कृत तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थों की सूक्तियाँ तो मिलती हैं किन्तु अधिक आकर्षणमयी उनकी वे (स्व-निर्मित) सूक्तियाँ भी हैं, जिनमें उन्होंने अपनी सूक्ष्मग्राही अतल-स्पर्शी अन्तर्दृष्टि द्वारा जीवन के नाना क्षेत्रों से सार-संचित करते हुए, उनको अपनी भाषा शैली में अभिव्यक्ति की सरलता और कला-विचक्षणता द्वारा मणियों के रूप में अनुस्यूत कर दिया है। ऐसी मणियाँ उनके प्रायः सभी उपन्यासों के पृष्ठों में बिखरी हुई हैं और अपनी कांति-दीप्ति से उनकी भाषा-शैली को चार चाँद लगाती रहती है। उनके उपन्यासों में नियोजित कतिपय सूक्तियाँ हैं -

01. हमारी सारी तकलीफ की जड़ में हमारा अज्ञान, हमारी अशिक्षा ही तो है।

02. दीन-दलित, उपेक्षित मानवता की सेवा के लिए जो कमर कसता है, सच्चा पुजारी वही है। हर मनुष्य भगवान का एक चलता फिरता मंदिर है।

03. सामूहिक पूजा-प्रार्थना में बड़ी शक्ति है।

04. बैर-भाव तो पालना ही नहीं चाहिए। वह तो दीवार पर फेंकी गेंद की तरह है जो पलटकर अपने पर ही चोट करती है।

05. जो ईश्वर की सन्तान से घृणा करता है, वह ईश्वर को क्या मानेगा?

06. बिना देवी शक्ति के कोई चर्चिल और जवाहर भले बन जाए महावीर और बुद्ध, क्राइस्ट और गाँधी नहीं बनता।

07. शोषक बनना जितना बुरा है, उतना ही शोषित होना भी।

08. साधना से पूत आत्मा शीशे की तरह साफ होती है, उसमें चाहे जो पढ़ लो, जो देख लो।

09. प्रारब्ध और भाग्य कर्म के ही प्रतिफल हैं।

10. अच्छे विचार अच्छे लोगों को ही छूते हैं।

11. औरत कोई स्टेशनरी और फर्नीचर नहीं है। उस पर अधिकार प्यार से ही पाया जा सकता है। पद और योग्यता के मद से कोई किसी को प्रभावित चाहे कर ले, किसी का सच्चा प्यार नहीं पा सकता।

12. भय होता है अज्ञान से। अज्ञान सभी भयों के मूल में है जब तक रस्सी को सांप समझते हो, भय से कांपते हो। जब रस्सी, रस्सी के रूप में दिख जाती है तो भय तिरोहित हो जाता है।

13. क्षमा सबसे बड़ा शस्त्र है।

14. प्रेम शक्ति है। निर्माण की प्रेरणा।[88]

15. पूजा-आराधना अथवा प्रार्थना, कर्म की प्रेरणा है, कर्म की बाधा बनते ही उनका महत्व समाप्त हो जाता है।

16. एक अधिकारी जिस तरह किसी अपात्र की झोली में मात्र उसकी चाटुकारिता से प्रसन्न हो, अनुग्रह नहीं डाल सकता, उसी तरह ईश्वर भी अपात्र की पूजा-उपासना को कोइ महत्व नहीं देता। जैसे किसी बेईमान को उसके सारे श्रम और सेवा के बावजूद कोई अधिकारी प्रोन्नति नहीं देना चाहेगा उसी तरह ईश्वरीय नियमों के उल्लंघन करनेवालों की पूजा-आराधना निष्फल ही

जाएगी।

17. अपवाद ही नियम के अस्तित्व को सिद्ध करता है - एक्सेप्शन प्रुव्स दी रूल।
18. धर्म और कर्म का समुचित समन्वय ही सफलता की शर्त है।
19. जैसे हर बीज में अंकुर आता है, उसका पौधा बनता है, उसमें फल-फूल लगता है, उसी तरह ईश्वरीय विधान के अन्तर्गत न तो अच्छा कार्य बिना पुरस्कार के जाता है न बुरा कार्य बिना दंड के।
20. सही अर्थों में धार्मिक तो वही है जिसमें संसार के सारे धर्मों के प्रति आदर और श्रद्धा हो।
21. इतिहास की तानाशाह औरतें, तानाशाह मर्दों से ज्यादा खतरनाक सिद्ध हुई हैं। अधिकार, और अधिकार का लोभ पैदा करता है।
22. नारी-स्वातंत्र्य के सारे नारों के बावजूद प्रकृति द्वारा स्थापित, नारी-पुरुष के अन्तर को मनुष्य समाप्त नहीं कर सकता।
23. हर क्रिया की ही प्रतिक्रिया होती है। क्रिया नहीं तो प्रतिक्रिया नहीं। नो रिएक्शन विदाउट ऐक्शन।
24. गॉड मेक्स ए वे व्हेयर देयर इज़ नो वे।
25. जैसे जल के बिना बिरवा सूखता चला जाता है, उसी तरह स्नेह के बिना मनुष्य भी सूख जाता है।
26. अप्रसन्नता ही अस्वास्थ्य का मूल है।
27. सच्चा और सही संग थोड़े दिनों का ही सही, गलत और झूठे दीर्घकालीन संबंधों से लाख दर्जे अच्छा है।
28. कुपुत्रो जायते क्वचिदऽपि कुमाता न भवति।[89]
29. उम्र की लम्बाई कोई चीज नहीं होती। महत्व होता है उस आत्मा का जो उम्र की बड़ाई-छोटाई की मुँहताज नहीं होती, उस संस्कार का जो कांटों में खिलते गुलाब की तरह कहीं भी खिल सकता है।
30. सच्चा प्यार अपने प्रिय पात्र को विशुद्ध प्रेम के पवित्र पुष्पों का नैवेद्य ही चढ़ाता है, कलुषित वासना का कीचड़ नहीं।
31. सच्चा प्यार प्रेरणा होता है। अग्नि में पड़नेवाली विशुद्ध आहुति। और प्रेरणा तो तुम्हारे जीवन को स्वर्ण की तरह निखारकर छोड़ती है।
32. कभी-कभी दो विपरीत प्रकृति के व्यक्तियों में भी ऐसी जमती है कि आजीवन

वह तोड़े नहीं टूटती।

33. अशुभ के गर्भ में शुभ नहीं पलता।

34. श्रद्धा और प्रेम में अन्तर ही क्या है? अगर श्रद्धा नहीं तो प्रेम, वासना के परिवर्तित रूप से अधिक होता भी क्या है?

35. जिसे अन्न के दानों की भूख है वह झूठे पत्तल पर भी टूटेगा। जिसे अपने स्वजनों, परिचितों से प्रशंसा के दो शब्द नहीं मिले वह किसी की झूठी प्रशंसा पर भी ऐसा फिर लेगा कि औंधे मुँह गिरते-गिरते बचेगा।

36. पुरुष के लिए प्रेम मात्र मनोरंजन का साधन अथवा अधिक से अधिक आवश्यकता है। औरत के लिए तो वह अनिवार्यता है, उसके बिना वह जी नहीं सकती। सच कहो तो वह उसकी 'टॉनिक' है - उसके बिना वह जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकती।

37. जो कार्य धीरे-धीरे होता है वह स्थायी होता है, जो कार्य शीघ्र सम्पादित होता है उसकी आयु भी क्षणिक होती है। बरगद का वृक्ष धीरे-धीरे बढ़ता है तो बहुत दिनों तक बना रहता है। एरण्ड का वृक्ष जल्दी-जल्दी बढ़ता है तो जल्दी ही समाप्त हो जाता है।

38. प्रेम का बिरवा तो तुलसी का पावन पौधा है, उसे जिस माटी पर बढ़ना है उसे गंगा की माटी की तरह पवित्र होना ही पड़ेगा।

39. पुरुष चाहे जितना महान् और उदारमना हो, वह अपनी उपेक्षा कब बर्दाश्त कर सकता है? ठीक उसी प्रकार जैसे औरत चाहे जैसी भी हो अपने सौन्दर्य का गर्व उस पर हावी रहता है।

40. बुराई बहुत कम लोगों को आकृष्ट करती है, भलाई सभी को खींचती है। कुछेक असामाजिक तत्व हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते अगर शेष लोग दृढ़ संकल्प हों - अच्छाई की प्रतिष्ठा और बुराई के निष्कासन के लिए।

41. बासी हो जाए तो वह कविता क्या और ठंडा पड़ जाए तो वह प्रेम क्या?

42. अपनी दृष्टि में सभी महान होते हैं। दूसरों की दृष्टि में उनका क्या रूप उभरता है, महत्व इसका है।[90]

43. देअर इज़ नो कंपीटीशन ऐट दी टॉप।

44. नारी की शक्ति प्यार की शक्ति है और प्यार की शक्ति परमेश्वर की शक्ति है।

45. उत्सर्ग का ही दूसरा नाम नारी है।

46. मनुष्य अपने जीवनरूपी जलयान का स्वयं नियंत्रक है।

47. जीवन परिवर्तन का नाम है। यहाँ हर वस्तु प्रति पल परिवर्तित होती रहती है तो एकरसता मानव-मन को भी रास नहीं आ सकती।[91]

48. वीर प्राणों की चिन्ता नहीं करते न शत्रु के, न अपने, न अपने प्राण-प्रियों के भी। क्षत्रिय के लिए युद्ध में वरण की गई मृत्यु स्वर्ग के कपाटों को तत्काल उद्घाटित कर छोड़ती है।

49. किशोर मन के कच्चे घड़े पर कोई भी चिह्न कर दो वह अमिट हो जाता है।

50. जिसके पास कुछ होता है उसे ही कुछ प्राप्त होता है।

51. भक्ति-मार्ग का पथिक परिहास, उपहास अथवा अपमान की चिन्ता नहीं करता। भक्ति की सही परीक्षा तो तभी होती है जब अपमान और अत्याचार भी हँसी-हँसी झेल जाते हैं।

52. करुणा, श्रद्धा, प्रेम और भक्ति की स्रोतस्विनी होती है नारी।

53. सूरज को मेघ कितना भी आच्छन्न करे उसके अस्तित्व का बोध तो विश्व को हो ही जाता है।

54. दो व्यक्तियों से पराभव कोई अपमान नहीं मानता अपितु इनसे पराजय की आकांक्षा करता है। ये दो हैं - पुत्र और शिष्य - 'पुत्रात् इच्छति पराजयः, शिष्यात् इच्छति पराजयः।'

55. मन विकारी है। वह जिसके हिस्से आता है उसके संस्कारों को ही अपना संस्कार बना लेता है।

56. वाणी जो नहीं कर पाती कर्म उसे स्वयं कर देता है।

57. व्यक्ति की परीक्षा उसकी निर्णय-क्षमता से होती है। निर्णय-अनिर्णय के मध्य त्रिशंकु-सा झूलने वाला व्यक्ति सहानुभूति और दया का पात्र होता है।

58. आदमी पैदा तो स्वतन्त्र होता है किन्तु बाद में वह हर स्थान पर अपने को बेड़ियों में ही जकड़ा पाता है।

59. कोई गुण तुम्हारे पास है तो तुम्हें कहीं जाने की आवश्यकता नहीं। संसार के इतने लोग तुम्हारे दरवाजे पर पहुँचना आरम्भ करेंगे कि तुम्हारे दरवाजे तक स्वयं एक सड़क पिट आएगी।

60. न्याय में विलम्ब अन्याय को ही प्रश्रय देता है।

61. दायित्व ग्रहण कर लेना बहुत आसान है पर उसका निर्वाह? अत्यन्त दुष्कर। यही सोचकर चिंतकों ने कहा कि वचन देने में विलम्ब करो पर वचन दे ही दो तो उसकी पूर्ति में शीघ्रता।

62. मनुष्य के कहीं पहुँचने के पूर्व उसकी विशेषताएँ पहुँचती हैंउसकी कीर्ति-अपकीर्ति।

63. निस्संदेह प्रेम सौन्दर्य से प्रेरित होता है। अन्त में सौन्दर्य चला जाता है पर प्रेम बना रहता है।

64. अगर विश्वास सचमुच इतना प्रबल हो, समर्पण इतना सम्पूर्ण, तो प्रेम को दैहिक सम्बन्ध की बैसाखी की आवश्यकता नहीं रहती।

65. समय, मृत्यु और ज्वार किसी की प्रतीक्षा नहीं करते।

66. स्मृति अगर मानव के लिए प्रकृति का उत्कृष्ट अवदान है तो विस्मृति उसके लिए सबसे बड़ा वरदान।

67. विजयोन्माद सभी उन्मादों में प्रबल होता है।-

68. मनुष्य की विवशता यह है कि वह अपने ही मापदंड से दूसरों को मापता है।

69. जो तुम पर विश्वास नहीं करना चाहते उनसे लाख तर्क करो वे तुम पर विश्वास करने से रहे और जिनका तुम पर विश्वास है उन्हें विश्वास दिलाने की कोई आवश्यकता नहीं।

70. भक्ति भाव अपने में कोई कार्य नहीं है क्या? यह सदाचार की नींव है और सदाचार के बिना कोई साम्राज्य टिक नहीं सकता।

71. अवसररूपी अश्व को पकड़ना हो तो उसके केश पकड़ो - ललाट पर झूलते केश। उसे पीछे से पकड़ने का प्रयास किया तो सफल होने के स्थान पर आहत होने की संभावना अधिक होगी।

72. प्रिय के संसर्ग-सम्पर्क में आई हर वस्तु प्रिय न हो उठे तो सच्चा प्रेम क्या?
92

73. प्रायः हर युग की नियति यही होती है। हर आनेवाला कल बीते कल में दृष्टिदोष ढूँढ लेता है।

74. जिसकी तलवार में ताकत नहीं हो उसकी सल्तनत भी दुश्मनों की आँधी में तिनके की तरह तबाह हो जाती है।

75. मंत्र और औषधि जितनी पुरानी हो उसकी गुणवत्ता उतनी ही बढ़ती है।

76. मातृ-शक्ति की उपेक्षा नहीं की जा सकती। वह चाहे दैवी हो या मानवी। भवानी का महत्व है तो जननी का भी है।

77. कर्म के साथ धर्म का समन्वय ही सफलता की पहली और अन्तिम शर्त है।

78. बाल मन भगवान का घर है।

79. जहाँ गुलामी वहाँ गरीबी,जहाँ गरीबी वहाँ गुलामी। दोनों सगी सिस्टर्स हैं।

80. हर अच्छी चीज कुछ कीमत मांगती है। कुछ त्याग चाहती है। बिना कुछ दिये, कुछ मिलता नहीं।

81. राजाओं और वीरों की सबसे बड़ी शत्रु विलासिता होती है। जो अपने चरित्र को नहीं गढ़ सका, वह राज्य क्या गढ़ेगा?

82. छोटी बातों के लिए बड़ी कुर्बानियाँ नहीं दी जातीं।

83. बलवान शत्रु की ओर से सन्धि का प्रस्ताव आए तो उसके पीछे अवश्य उसकी कोई चाल निहित होगी।

84. किसी अदृश्य की प्रेरक शक्ति भी प्रयास को पूर्णता तक ले जाने में सहायक होती है।

85. मुक्ति और सिद्धि का कोई अन्य मार्ग नहीं। कर्म ही वह राजमार्ग है जिसके माध्यम से अर्थ, काम और मोक्ष सभी सधते हैं।

86. अनेकानेक संशयों का विनाश करनेवाले और परोक्ष को भी प्रत्यक्ष करनेवाले, शास्त्रों का जिन्हें ज्ञान नहीं वे आँखों के रहते भी अन्धे हैं।

87. संशय ही विनाश की जड़ है।

88. जब तक साहस नहीं छोड़ो भाग्य तुम्हें नहीं छोड़ता।

89. ऐसा कोई तूफान नहीं जो घिरने के बाद छूटे नहीं।

90. जहाँ सम्पूर्ण के नाश का प्रश्न हो वहाँ आधे से भी हाथ धो अपना काम बना लेना चाहिए।

91. हर रात के बाद सवेरा होता है। ऐसा कोई अन्धकार नहीं घिरा। जिसे प्रकाश ने परास्त नहीं किया हो। मनुष्य का कर्तव्य है कि वह हाथ पर हाथ धर नहीं बैठकर आने वाले अनुकूल समय के स्वागत को प्रस्तुत रहे। ऐसा नहीं कि जब भाग्य दरवाजे पर दस्तक दे तो उसे सोया पा दूसरे दरवाजे की ओर बढ़ जाय।

92. अहंकार के आगमन के साथ ही व्यक्ति का अध:पतन आरम्भ हो जाता है।[93]

93. समय के अनंत प्रवाह में जो क्षण प्रवाहित हो जाता है उसे फिर से पकड़ना संभव नहीं।

94. हर घटना अपने पूर्व रूप में नहीं घटती।

95. जिसे गढ़ नहीं सकते उसे मिटाने का अधिकार तुम्हें किधर से मिला?

96. बुद्धिमान बीत गई बात और बह गए पानी के पीछे नहीं दौड़ते।

97. क्रिया से अधिक विचार का महत्व है। विचार ही तो क्रिया से रूपांतरित होता है।

98. कभी-कभी गुरु गुड़ ही रह जाता है और चेला चीनी बन जाता है।

99. जिस रास्ते बड़े लोग जाते हैं उसी राह दूसरे भी जाने लगते हैं।

100. प्रेमहीन काम सत्यानाश का मूल है, विनाश का स्रोत। जब-जब काम ने प्रेम को पैरों तले कुचलकर अपनी विजय-पताका फहराई है तब-तब व्यक्ति विनाश के गर्त में पहुँचा है फिर चाहे विश्वामित्र के सदृश मुनि हों अथवा ब्रह्मा के सदृश देवाधिदेव।

101. सदा सिद्धांत के धरातल पर रहनेवालों को व्यवहार का ज्ञान कम ही होता है।

102. मन बहुत चंचल और अधिकार में आने योग्य नहीं है। फिर भी अभ्यास और वैराग्य द्वारा उसे नियंत्रित किया जा सकता है।

103. हितकार तो वही जो बिना प्रतिदान की अपेक्षा किए आपके हित को साधे।

104. आत्मप्रशंसा तो मृत्यु के समान है।

105. एक की अप्रसन्नता अक्सर दूसरे की प्रसन्नता का कारण बनती है - सबब।[94]

106. शक्तिमान शत्रु से लोहा लेना है तो शक्ति और ऐश्वर्य संजोना ही पड़ेगा।

107. धरती उर्वरा हो तो बीज स्वयं एक दिन वृक्ष बन जाता है।

108. महान् पुरुषों के क्रिया-कलाप प्रायः मिलते-जुलते हैं।

109. धर्म-विहीन बुद्धि अपने सारे अर्जित ज्ञान को मानवता के कल्याण नहीं उसके संहार में ही झोंक सकती है।

110. युद्ध और सन्धि दोनों शत्रु शिविर में जाकर नहीं चर्चित किए जा सकते।

111. प्रेम मानव की जीवन-सरिता का पानी है। पानी सूखा, सरिता मरी। प्रेम मरा तो मन मरा। मन मरा तो तन को मरने में बहुत समय नहीं लगता।

112. दूरी सदा प्रेम में अभिवृद्धि का ही कारण बनती है। वियोग प्रेम का प्राण है, मिलन प्रायः उसकी मृत्यु।

113. विश्रामपूर्ण जीवन, मरण से अधिक कुछ नहीं।

114. ईश्वर को अर्पित सब कुछ नैवेद्य बन जाता है, प्रेम भी।

115. हमारी मान्यताएँ हमारी भावनाएँ जब आहत होती हैं तब भी हिंसा होती है। शारीरिक हिंसा तो कभी-कभी ही होती है, मानसिक, भावनात्मक, संवेदनात्मक हिंसा की संभावना पग-पग पर बनी रहती है।

116. प्रेम अक्सर अवाक् होता है। सच्चे प्रेम की वाणी होती ही नहीं।

117. प्रेम और भक्ति दोनों भावुकता पर ही पलती है। बुद्धि का साम्राज्य वहाँ समाप्त हो जाता है।

118. स्वभाव नहीं परिवर्तित होता, वह परिष्कृत हो सकता है।

119. प्यार और कर्तव्य की तुलना में कर्तव्य का पलड़ा सदा भारी रहा है।

120. हीरे को जितना तराशो उतनी ही अधिक चमक उसमें आती है।

121. जैसे बीज में वृक्ष का स्वरूप छिपा रहता है, वैसे ही नादान मानव-शिशु के अन्दर भी उसका भविष्य बैठा होता है।

122. एक योग्य शिष्य को पाकर शिक्षक भी अपने को सौभाग्यशाली समझता है।

123. अच्छी बात शव (लाश) के मुँह से भी निकले तो उसे ग्रहण कर लेनी चाहिए।

124. प्रेम से बड़ा कोई सुख नहीं, उपेक्षा से अधिक कोई संताप नहीं। आश्चर्य नहीं कि दोनों अधिकांश स्थितियों में कल्पित आरोपित ही रहते हैं।

125. घृणा पाप से की जाती है, पापी से नहीं।

126. आँसू औरतों के लिए आभूषण हो सकते हैं, पुरुषों की तो आंतरिक दुर्बलता के ही द्योतक हैं वे।

127. जीवन ईश्वर का वरदान है। इसकी रक्षा कर ही हम उसे प्रसन्न कर सकते हैं; उसको समाप्त करने की योजनाएँ बनाकर नहीं; मृत्यु की प्रतीक्षा कर नहीं।[95]

128. अवसर की तलाश में रहनेवालों के पास वह आता ही रहता है।

129. प्रेम अधिकार का अधिकारी कब से हो गया? वह तो त्याग का पर्याय है। वह स्वार्थ के वशीभूत कब से होने लगा, वह तो निस्वार्थता का प्रतीक है।

130. शत्रुओं और वेश्याओं के सामने खाई शपथ का कोई अर्थ नहीं रहता।

131. धर्मनीति जब राजनीति के समानांतर चलने लगे तो उससे सम्बद्ध लोगों का

दायित्व बढ़ जाता है। धर्म और राजनीति ऐसे दो विपरीत ध्रव हैं। एक कमल तो दूसरा कीचड़। पर प्रकृति की विडंबना यह है कि कीचड़ से ही कमल उत्पन्न होता है। सौभाग्य या दुर्भाग्यवश धर्म अक्सर राज्याश्रित रहता है।

132. अन्याय को प्रश्रय नहीं दिया जा सकता। जो अपराधी को क्षमा करता है वह कम बड़ा अपराधी नहीं है।

133. साँप को छेड़ो नहीं और छेड़ो तो उसके सिर को पूरी तरह से कुचल दो।

134. वीरता शरीर के गठन में नहीं होती न उसकी लंबाई, चौड़ाई और मुटाई में। वीरता बसती है आत्मविश्वास में, उत्साह और साहस में।

135. संकट और संघर्ष की घड़ियाँ जितनी ही लंबी खिंचती है, सफलता और प्रसन्नता उतनी ही आकर्षक प्रतीत होती है।[96]

136. जननी-जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।

137. परोपकार ही पुण्य है और दूसरे को पीड़ा पहुँचाना ही पाप है।

138. त्रुटियों को निःशेष कर अपने व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाने में अवमानना और उपेक्षा से बढ़कर शायद ही कोई और समर्थ तत्व हो।

139. सत्य ईश्वर है। सत्य और अहिंसा के बल पर बड़ी-से-बड़ी ताकत का भी हम मुकाबला कर सकते हैं।

140. संघ में ही बल है। असंगठित रहकर हम अत्याचारियों-अनाचारियों का सामना नहीं कर सकते।

141. जिस बात को मन की गहराइयों से चाहो वह होकर रहती है।

142. जो कीर्तिवान है वह मरकर भी नहीं मरता।

143. सत्याचारियों की सहायता ईश्वर अवश्य करता है।

144. जो अनन्य भाव से भगवान का हो जाता है उसके योगक्षेम का वहन वह स्वयं करता है।

145. सच्चा धार्मिक वही है जो पहले कर्मी अथवा कर्ता है। जैसे आत्मा के बिना शरीर मृत है, उसी तरह कर्म के अभाव में धर्म का भी अस्तित्व नहीं है।

146. लेखनी मे बहुत शक्ति है पर जैसे बाढ़ का निरंकुश पानी भारी बरबादी का कारण बनता है, उसी तरह निरंकुश लेखनी विनाशकारी होती है।

147. दैवी अनुग्रह की परीक्षा नहीं प्रतीक्षा की जाती है।

148. बबूल-वन बोने वाले काँटों की ही फसल काटते हैं।

149. उत्सुकता ही मनुष्य की जीवन्तता का अथवा उसके होने का सूचक है।[97]

150. सहज शंकालु मन अर्थ का अनर्थ कर बैठता है।

151. विवेक-हीन आचरण से विवेकपूर्ण आचरण सदा अधिक सराहनीय होता है।

152. हर कर्म को तटस्थ भाव से करो तो कष्ट का बोध नहीं होता।

153. अन्धकार और प्रकाश दोनों का सहअस्तित्व संभव ही नहीं है - भय और भगवान दोनों साथ नहीं बसते।

154. वस्तुस्थिति का सही ज्ञान प्राप्त किए बिना जो शीघ्रता मे कोई आचरण करता है उसे पश्चाताप के सिवा और कुछ हाथ नहीं लगता।

155. राजा का पाप भी प्रजा को ले डूबता है, अगर प्रजा ने अपने कर्म का पालन नहीं किया हो। पिता का पाप भी पुत्र के विनाश का कारण बनता है।

156. काल अधिकतर स्वर्ण की ओट से ही आखेट करता है।

157. कृत्रिमता वास्तविकता से ज्यादा ही मोहक होती है। कृत्रिम स्वर्ण के आभूषण भी असली से ज्यादा ही दीप्तिमान लगते हैं।

158. असल रथ तो धर्म-रथ है। शौर्य और धर्म जिसके दो चक्र होते हैं और सत्य और शील उसके ध्वज होते हैं। इसी धर्म-रथ से विजय संभव होती है।

159. किसी की पराजय पर विजयोत्सव मनाना मनस्वियों का धर्म नहीं।

160. जिसमें जिन गुणों को आरोपित किया जाये उसमें देर-सवेर आ ही जाते हैं।

161. उत्साह ही सफलता और असफलता के मध्य का अन्तर है।

162. बल देकर कहने मात्र से कोई गलत बात सही नहीं हो जाती, न सौ बार भी कहने से कोई मिथ्या सत्य बन सकता है।

163. लक्ष्य तीन प्रकार से प्राप्त होते हैं - इच्छा द्वारा, कर्म द्वारा और प्रेरणा द्वारा।[98]

164. शत्रु और व्याधि को उत्पन्न होते ही समाप्त नहीं कर दिया जाय तो एक दिन वे उस व्यक्ति को ही समाप्त कर देते हैं।

165. विपत्ति कभी अकेले नहीं आती।

166. किसी को सदा के लिए नहीं मान लो - सम्पत्ति को भी, विपत्ति को भी, सुख को भी, सौभाग्य को भी, दुर्भाग्य को भी। जो आ गया वह जानेवाला भी है और जो नहीं आया है वह प्रतीक्षा में है।

167. केसरी (सिंह) जहाँ जन्म ग्रहण करता है उससे हजारों कोस की दूरी पर

उसकी मृत्यु होती है। श्रृगाल जिस वन में पैदा होता है वहीं मरता है।

168. भविष्य की आशंका से वर्तमान को बरबाद मत करो।

169. जो वर्तमान का उपभोग करना जान गया, उसका जीवन सत्य से साक्षात्कार हो गया।

170. इस विश्व में एक ही बन्धन है जिसे हर व्यक्ति स्वेच्छा से स्वीकारने को प्रस्तुत है। वह है प्रेम का बन्धन। स्नेह-रज्जु।

171. व्यक्ति सबकुछ झेल सकता है - शारीरिक से लेकर मानसिक पीड़ा तक। पर अपमान? नहीं, यह हलाहल तो घोंटे नहीं घुटता। किसी नीलकण्ठ के ही वश की बात हो सकती है, इस विष को पचा जाना।

172. आत्मविश्वास भर आए अन्दर तो उत्साह जगता है और जब उत्साह जग आए तो कुछ असम्भव नहीं रहता है।

173. नीति की बातें एकान्त में ही करो तो सफलता सुनिश्चित होती है।

174. नारी शक्ति है, प्रेरणा है, वह नवनीत की तरह कोमल अवश्य सही पर आवश्यकता पड़ने पर वह शिलाखण्ड की तरह कठोर और अभेद्य भी हो सकती है।

175. सत्य और अग्नि को बहुत देर तक ढँककर रखना कभी क्षेमकारी नहीं हुआ है।

176. पत्नी अगर मूर्ति पर चढ़ा नैवेद्य है तो प्रेरणा अथवा प्रेयसी सद्यःप्रस्फुटित पुष्प का पवित्र पराग।

177. ईश्वर पैदा नहीं होता, बनता है।

178. जो अपने भवन के गवाक्षों को बन्द कर लेता है, वह सूरज की किरणों और स्वच्छ प्राण-वायु के प्रवेश को वर्जित कर देता है। उसे मारने के लिए किसी और की आवश्यकता नहीं होती।

179. राजनीति की चालों और द्यूत के पासों में समानता होती है।

180. जो लीक से हटकर चलता है वह अपना मार्ग स्वयं गढ़ता हैऔर समाज उसे महान् मान लेता है - पथ प्रदर्शक।

181. साधना और श्रम कभी व्यर्थ नहीं जाते।[99]

182. नियन्ता के हर कार्य के पीछे एक मंगल-विधान ही छिपा रहता है।

183. संयोग और वियोग जीवन के साथ दिवा-रात्रि की तरह जुड़े हैं। मिलन की

स्वाभाविक परिणति बिछुड़न में ही है।

184. क्रोध जिस प्रथम वस्तु को अपना ग्रास बनाता है, वह है विवेक।

185. स्वच्छ मन से निकले आशीर्वाद और श्राप व्यर्थ नहीं जाते।

186. अन्धकार चाहे जितना गहरा हो, प्रकाश की एक बलवती किरण भी उसे निःशेष करने को पर्याप्त होती है।

187. एक अधर्मी, अनाचारी किन्तु बलशाली योद्धा को पराजित करना एक धार्मिक, सात्विक किन्तु अपेक्षाकृत दुर्बल राजा से अधिक आसान है।

188. वेश्याओं और सेनाओं को नगर से जितना पृथक् रखो उतना ही अच्छा।

189. नारियाँ केवल दैहिक क्षुधा की तृप्ति को व्याकुल नहीं होतीं। भावना के सहारे भी वे प्रसन्नता से जी लेती हैं।

190. भक्त भगवान की ओर एक पग बढ़ाता है तो भगवान उसकी ओर सौ पग बढ़ाते हैं।

191. भगवान जिसे अपनाता है, उसे अपनी तरह तो बना ही लेता है।

192. ईर्ष्या होती ही है ऐसी। साही के कांटे की तरह एक बार मन में चुभ गई तो लाख निकालो वह निकलने से रही।

193. अपमान से बढ़कर मानव-मन को पीड़ित करनेवाली कोई बात नहीं गढ़ी विधाता ने इस सृष्टि में। मानव का आजीवन प्रयास प्रायः दो उद्देश्यों की और ही उत्प्रेरित रहता है - मान की वृद्धि और अपमान से रक्षा।

194. महान केवल सिंहासनों के अधिपति ही नहीं होते महान वे भी होते हैं जिन्होंने साधना और अध्यवसाय से तन और मन दोनों को परिष्कार के स्पृहणीय उत्कर्ष पर पहुँचाया हो।

195. मानवीय आकांक्षाओं के अश्वों के मुँह में वल्गाएँ नहीं दो तो वे महत्वाकांक्षाएँ बन आती हैं और इस वल्गा-हीन अश्वों पर सवारी करने का लोभ करो तो वनाश्वों की तरह ये तुम्हें किस विपिन में ला पटकेंगे, उसका कोई पता नहीं।

196. जो राजा कूटनीति से काम नहीं लेता उसका विनाश अवश्यम्भावी है।

197. अधिकार के साथ जब अहंकार संयुक्त हो जाता है तब बुद्धि अकरणीय को करणीय और करणीय को भी अकरणीय मान बैठती है।

198. जीवनरूपी रथ के चार चक्र हैं - धर्म, नीति, पराक्रम और आत्मविश्वास। इनमें से किसी एक से भी रहित व्यक्ति जीवन में सफलता नहीं प्राप्त कर सकता।[100]

199. फेक्ट इज़ स्ट्रोंगर देन फिक्शन - कभी-कभी सत्य, कल्पना से ज्यादा विस्मयकारी होता है।

200. बुद्धिमान दूसरों की गलतियों से सीखता है, मूर्ख अपनी गलतियों को बार-बार दुहराता है।

201. राह के प्रलोभन ही राह को लम्बा कर देते हैं।[101]

उद्धरण

उपन्यास एक ऐसी कला है जिसमें अनेक विधाओं का प्रयोग होता है कई बार लेखक अपने मंतव्य या उद्देश्य को स्पष्ट करने के लिए अपनी पूर्व परम्परा से कुछ लेखकों और कवियों के उद्धरणों

को लेता है। इस प्रकार के उद्धरणों से हमें लेखक की व्युत्पत्ति-ज्ञान का पता चलता है। काव्य के हेतुओं में 'व्युत्पत्ति' को भी स्थान दिया है। 'व्युत्पत्ति' का अर्थ है विविध विषयों का ज्ञान। जब हम किसी लेखक के उपन्यास में पूर्व परम्परा के ग्रन्थों के उद्धरण पढ़ते हैं तो उससे यह भी प्रमाणित होता है कि लेखक ने भी उन-उन ग्रन्थों को पढ़ा है। इस प्रकार के उद्धरणों से लेखक के ज्ञान का विकास तो होता ही है पाठक भी उससे लाभान्वित होता है। पात्र-निरूपण और चरित्र-सृष्टि में भी उद्धरणों का विशेष महत्व है क्योंकि पात्र जिन उद्धरणों को उच्चरित करता है उनसे उनके मानसिक गठन का भी पता चलता है। उपन्यास में यदि कोई पात्र गीता के श्लोक उद्धृत करता है तो उससे इतना प्रमाणित होगा कि वह पात्र आस्तिक प्रकृति का है और गीता में उसकी आस्था है। अज्ञेय के उपन्यासों में ऐसे पात्र मिलते हैं जिनका अंग्रेजी साहित्य का ज्ञान बड़ा गहरा होता है तो ऐसे पात्रों के मुँह से ही डी.एस. इलियट; डी.एच. लॉरेन्स, शैली या किट्स की पंक्तियाँ उच्चरित होती हैं। अतः उपन्यास में उद्धरणों का आवश्यकतानुसार प्रयोग किया जाता है। संस्कृत, हिन्दी, बंगला और अंग्रेजी के विद्वान डॉ. मिश्र के उपन्यासों में भी संस्कृत, बंगला, गुजराती, हिन्दी, मैथिली, ब्रज, अवधि, अंग्रेजी आदि भाषाओं के कवियों के उद्धरण तो मिलते ही हैं साथ ही वेद, पुराण, उपनिषद, गीता, रामायण, बाइबल, कुरान, रामचरितमानस आदि अनेक धार्मिक ग्रन्थों के उद्धरण भी प्राप्त होते हैं। हिन्दी कवियों में भक्तिकाल के कबीर, मीरा, तुलसीदास, सूरदास, गुरु नानक, गोविन्दसिंह, संतोषसिंह, धरमसिंह आदि के उद्धरण पाए जाते हैं तो साथ ही आधुनिक काल के जयशंकर प्रसाद और महादेवी वर्मा के उद्धरण भी उपलब्ध होते हैं। विद्यापति के कुछ

मैथीली भाषा में रचित पद भी मिल जाते हैं। अंग्रेजी के उद्धरण के अंतर्गत कुछ कवियों, बाइबल के कथन तथा सूक्तियों को लिया गया है। हमने यहाँ पर विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों, दार्शनिक और कवियों को अनूदित उद्धरणों को भी प्रस्तुत किया है। डॉ. मिश्र के उपन्यासों में उद्धरणों की बहुलता पाई जाती हैं किन्तु यहाँ पर हमने कुछेक उद्धरणों को प्रस्तुत किया है। उद्धरण के पहले उपन्यास का नाम तथा उद्धरण पूर्ण होने पर पृष्ठ संख्या कोष्ठक में दर्शायी गई है।

संस्कृत के उद्धरण

डॉ. मिश्र संस्कृत के विद्वान हैं। देवभाषा संस्कृत के लिए उनके मन में आदर भरा स्थान है। उन्होंने अनेक संस्कृत-ग्रन्थों का गहरा अध्ययन किया है। अतः उनके इस अध्ययन का प्रभाव उनके उपन्यासों में भी दृष्टिगोचर होता है। प्रायः उद्धरणों को संस्कृत के विद्वान पात्र के मुख से या संस्कृत के प्रचलित श्लोकों को अन्य पात्र के मुख से उद्‌धृत करवाया गया है। संस्कृत उद्धरणों के अन्तर्गत विभिन्न देवी-देवताओं की स्तुति या श्लोक, नीति वाक्य, सूक्ति, गीता, वाल्मीकि रामायण, उपनिषद, पुराण, महाभारत, वेद आदि के श्लोक तथा कालिदास के ग्रन्थों के श्लोक आदि पाए जाते हैं। उनके उपन्यासों में श्लोक या वाक्य बहुत-से आए हैं पर हमने कुछेक श्लोक का उल्लेख किया है। यथा-

सूरज के आने तकः

1. कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने
   प्रणत क्लेशनाशाय गोविंदाय नमोनमः ॥ पृ. 5
2. काव्यशास्त्र विनोदेन कालो गच्छति धीमताम्,
   व्यसनेन च मूर्खाणां निद्रया कलहेन वा ॥ पृ. 8
3. विद्या विनय सम्पन्ने ब्राह्मणे गविहस्तिनी
   शुनि चैव श्वपाके च पंडिता समदर्शिनः ॥ पृ. 11
4. सरसिजमनुबुद्धिं शैवलेनापि रम्यम्
   मलिनमपि हिमांशुर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति।
   इयमाधिकमनोज्ञा, वल्कलेनापि तन्वी
   किं हि मधुराणां मंडनमाकृतिनाम् ॥ पृ. 31
5. महाजनो येन गतः स पन्थाः ।

6. उत्सवे व्यसने चैव दुर्भिक्षे राष्ट्र विप्लवे,
राजद्वारे श्मशाने च यः तिष्ठति स बान्धवः ॥ पृ. 35

7. तन्वी श्यामा शिखिर दशना पक्वबिम्बाधरोष्ठी,
मध्ये क्षामा चकित हरिणी प्रेक्षणानिम्ननामी।
श्रोणी भारादलसगमना स्तोकनम्रास्तनाभ्यां।
या तत्र स्यात् युवती विषये, सृष्टिराद्येव धातुः ॥ पृ. 42

8. ईश्वरः सर्वभूतानां हृददेशे अर्जुन तिष्ठति

9. अनन्यश्चिन्तयन्तो मां यो जनाः पर्युपासते,
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यम् ॥ पृ. 62

10. नमामीशमीशानं निर्वाण रूपं
विभुं व्यापकं ब्रह्मवेद स्वरूपं
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं
चिदाकाशमाकाश वासं भजेऽहं
निराकारमोंकारं मूलं तुरीयं
गिराज्ञान गोतीतमीशं गिरीशं
करालं महाकाल कालं कृपालं
गुणागार संसारपारं नमोऽहं
तुषाराद्रि संकाश गौरं गंभीरं।
मनोभूत कोटि प्रभा श्री शरीरं। पृ. 112

नदी नहीं मुड़ती

11. शरीरमाद्यं खलु धर्म साधनम् । पृ. 61

12. अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचन द्वयम।
परोपकारः पुण्याय पापाय परपीडनम् ॥ पृ. 63

13. या श्रीः स्वयं सुकृतिना स्वयं भुवनेष्वलक्ष्मीः
पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ।
श्रद्धा सतां कुलजन प्रभवस्य लज्जा
ता त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम् ॥ पृ. 115

14. शूलेन पाहि नो देवि पाति खड्गेन चाम्बिके।
घंटास्वनेन नः चापज्यानि स्ववेन च॥
प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ।
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
यानि चात्यर्थ घोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥ पृ. 116

एक और अहल्या

15. यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता । पृ. 94

16. शनैः पंथाः शनैः कंथाः शनैः पर्वतलंघनम् । पृ. 95

17. चंचल हि मनः कृष्ण प्रमथिबलवदृढ़म्।
तस्य निग्रहमहमन्ये वायुरिव सुदुष्करम् ॥ पृ. 108

18. अनाघ्रातं पुष्पं किशलयमलूनं कररुहै
रत्नाविद्ध रत्नं मधु नवमनास्वादित रसम्।
अखंड पुण्यानां फलमिव तदनुरूपमनघं
न जाने भोक्तारं कंमिह समुपस्थास्याति विधि ॥ पृ. 122

19. देवि प्रपन्नार्तिहरे प्रसीद
प्रसीद मातर्जगतोऽ खिलस्य ।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं
स्वामीश्वरी देवी चराचरस्य ॥ पृ. 145

20. संगात् संजायते कामः कामात् क्रोधोऽभिजायते ।
क्रोधात् भवति संमोहः संमोहात् स्मृति विभ्रम्ः ।
स्मृति भ्रशांत बुद्धि नाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति ॥ पृ. 182

लक्ष्मण-रेखा

21. आहार निद्रा भय मैथुनं च सामान्य एतत् पशुभिः नराणाम्,
ज्ञानं हि तेषां अधिको विशेषो ज्ञानेन हीनाः पशुभिः समाना ॥ पृ. 154

22. यदि हस्ति तदन्यत्र, यन्नेहास्ति न तत्कवचित्। पृ. 155

बंधक आत्माएँ

23. शस्यमिव पच्यते मर्त्यः शस्यमिव जयते पुनः । पृ. 7

24. सर्व मंगल मांगल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके।
शरण्ये त्र्यंबके गौरी नारायणि नमोस्तुते ।। पृ. 50

25. शरणागत दीनार्त परित्राण परायणे
सर्वस्यार्त हरे देवि नारायणि नमोस्तुते ।। पृ. 50

26. किमर्थं चापि निक्षिप्य दूरे बलमिहावतः ।
कस्मान्नेहोपयातोऽसि सबलः पुरुषर्षभ।। पृ. 150

27. वाजि मुख्या मनुष्याश्चमत्ताश्चवरवारणाः
प्रच्छाव्य भगवन् भूमिं महतीमनुयान्ति माम् ।। पृ. 150-151

28. चतुः शालानि शुभ्राणि शालाश्च गजवाजिनाम् ।
हर्म्यप्रासाद संयुक्ततोरणानि शुभानि च ।। पृ. 151

29. सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वं पापेभ्यो मोक्षयिस्यामि मा शुचः ।। पृ. 162

पीतांबरा

30. त्रिविधं नरकस्येदम् द्वारम् नाशनमात्मनः ।
कामः क्रोधस्तथा लोभः तस्मादेतत्त्रयं त्यचेत् ।। पृ. 59-60

31. ॐ गणानांत्वा गणपतिग्वं हवामहे, प्रियाणांत्वा प्रियपतिग्वं हवामहे,
निधीनात्वा निधिपतिग्वं हवामहे। वसोमं आहम जानि गर्भ धयात्वम्
जासि गर्भ धम। ॐ गणाधि गणपतये नमः, गौरी देव्यै नमः ।
इहा गच्छ इह तिष्ठ इमां मम पूजां गृहाण । पृ. 168

32. ॐ स्वस्तिनः इन्दो वृद्ध सर्वाः स्वस्तिनो
पुष्या इष्टादेवा, स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातुः...। पृ. 69

33. ॐ सूर्याय नमः, ॐ चन्द्रमाय नमः, ॐ मंगलाय नमः,
ॐबुधाय नमः, ॐ बृहस्पतये नमः, ॐ शुक्राय नमः,
ॐ शनिश्चराय नमः , ॐ राहवे नमः, ॐ केतवे नमः ।पृ. 69

34. ॐ ग्राम-देवेभ्यो नमः, ॐ ग्राम-देवेभ्यो नमः ॐ नगर-देवेभ्यो नमः,

ॐ सर्वेभ्योः देवेभ्यो नमः, ॐ सर्वेभ्यो देविभ्यो नमः ॥ पृ. 69

35. ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंचित जगत्यां जगत्,
तेन त्यक्तेन भुंजिथा, मा गृद्धः कस्यचित् धनम् । पृ. 86

SMT. HANSA MEHTA LIBRARY M. S. University of Baroda

36. क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया, दुर्गम फथस्तत कवयो वदन्ति। पृ. 145

37. यस्याः पावे प्रथमे, द्वादश मात्रास्तथा तृतीये इति।
अष्टादश द्वितीये चतुर्थ के पंचदश-सा आर्या। पृ. 150

38. चंचल ही मनः कृष्णः, प्रमथि बलवदृढम्
तस्य निग्रहमहमन्ये वायुरिव सुदुष्करम् ॥ पृ. 168

39. नरत्वं दुर्लभं लोके विद्या तत्र सुदुर्लभा
कवित्वं दुर्लभं लोके शक्तिस्तत्र सुदुर्लभा। पृ. 172

40. मंगलम् भगवान विष्णु, मंगलम् गरुडध्वजः
मंगलम् पुण्डरिकाक्षः मंगलाय तनो हरि॥ पृ. 273

41. स्थाने ऋषीकेश तव प्रकीर्त्यां जगत्प्रदुष्यत्यनुरज्यते च।
रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसङ्धाः ॥ पृ. 359

42. किरीटिनं गदिनं चक्रहस्तमिच्छामि त्वां द्रष्टुमहं तथैव।
तेनैव रूपेण रूपर्भुजेन सहस्रबाहो भव विश्वमूर्ते॥ पृ. 360-361

43. ममैवांशो जीवलोके जीवभूतो सनातनः पृ. 617

पहला सूरज

44. न मंत्र, नो यंत्रं, तदपि च न जाने स्तुतिमहो।
न चाह्वानं, ध्यानं, तदपि च न जाने स्तुतिकथा।
न जाने मुद्रास्ते, तदपि च न जाने विलपनं
परं जाने मातस्त्वदनुशरणं क्लेशहरणं ॥
विधेरज्ञानेन द्रविण विरहेणालसतया
विधेयाशक्यत्वा तव चरणयोर्या च्युतिर्भूत
तदेतत् क्षन्तव्यं जननी, सकलोद्धारिणी शिवे
कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि माता कुमाता न भवति ॥ पृ. 13-14

45. वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।

तथा शरीराणि विहाय जिर्णान्यिन्यानि सयाति नवानि देही॥पृ. 46

46. नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः ।
न चैनं क्लेदयन्ति आपो न शोषयति मारुतः ॥ पृ. 46

47. नलो दधीची सगरः पुरूरवा सकौन्तलेयो भरतो धनंजयः
रामत्रयः वेणु वली युधिष्ठिरः कुर्वन्तु वः पूर्ण मनोरथं सदा
गंगा व क्षिप्रा यमुना सरस्वती गोदावती वेत्रवती च नर्मदा
सा चन्द्रभागा वरुणा असी नदी कुर्वन्तु वः पूर्ण मनोरथं सदा पृ. 110

48. अतुलित बल धामं हेम शैलाम देहं
दनुज वनाकृशानुं ज्ञानि नामग्रगण्यम्
सकल गुण निधानं वानराणामधीशं
रघुपति प्रिय भक्तं वात जातं नमामि । पृ. 139

49. ॐ गणपतये स्वाहा, ॐ कार्तिकेयाय स्वाहा,
ॐ स्कन्दाय स्वाहा, ॐ शिवाय स्वाहा पृ. 333

50. जयंती मंगला काली, भद्रकाली कपालिनी
दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोस्तुते ॥ पृ. 332

देख कबीरा रोया

51. यथा पिंडे तथा ब्रह्मांडे पृ. 133

52. शास्त्रानधित्यापि भवन्ति मूर्खाः
यस्तुक्रियावान् पुरुषः स विद्वान् ॥ पृ. 221

53. विद्या विनय संपन्ने, ब्राह्मणे गवि हस्तनि
शुनि चैव श्वपाके च, पंडिताः समदर्शिनः ॥ पृ. 238

54. धर्म एव हतो हन्ति। धर्मे रक्षति रक्षितः ॥ पृ. 359

का के लागूं पांव

55. स्वदेशे पूज्यते राजा, विद्वान सर्वत्र पूज्यते। पृ. 17

56. मातृवत् परदारेषु लोष्टवत् ।
आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति स पंडितः ॥ पृ. 240-241

57. प्राणायथात्मनोऽभिष्टा भूतानामपि ते तथा।
आत्मौपम्येन भूतेषु यः पश्यति स पश्यति ॥ पृ. 241

58. नियतं कुरु कर्म त्वम् कर्म ज्यायोह्यकर्मणः।
शरीरयात्रापि च तेन प्रसिद्धयेत् अकर्मणः ॥ पृ. 433

59. कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन । पृ. 433

गोबिन्द गाथा

60. यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवती भारत।
अभ्युत्थानम्धर्मस्य, तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥
परित्राणाय साधूनं विनाशाय च दृष्कृताम् ।
धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ॥ पृ. 81-82

61. सर्व धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज। पृ. 86

62. वर्णनामर्थसंधानां रसानां छंदसामपि।
मंगलानां च कर्तारौ वंदे वाणी विनायकौ ॥ पृ. 168

63. हेतुः समस्त जगतां त्रिगुणाप दोषै।
र्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा । पृ. 170

64. नाहं वसामि वैकुंठे योगितां हृदये न च।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ॥ पृ. 193

65. चातुर्वर्ण्यँ मया सृष्टं गुणकर्म विभागशः । पृ. 64

पवनपुत्र

66. वहन्ति वर्षन्ति नदन्ति भान्ति ध्यायन्ति नृत्यन्ति समाश्वसन्ति।
नद्यो धना मत्तगजा वमान्ताः प्रियविहीनाः शिखिनः प्लवंगमाः॥ पृ. 89

67. जाता वनान्ताः शिखिसुप्रनृत्ता जाताः कदम्बाः एकदम्बशाखाः।
जाता वृषा गोषु समानकामा जाता मही सस्यवनाभिरामा ॥पृ. 89-90

68. कामं दृष्टा मया सर्वा विश्वस्ता रावणस्त्रियः
न त मे मनसा किंचिद वैकृत्यमुपपद्यते ॥ पृ. 122

69. कपीनां किल लांगलमिष्टं भवति भूषणम्

तदस्य दीप्यतां शीघ्रं तेन दग्धेन गच्छतु ॥ पृ. 145

70. गगनं गगनाकारं सागरः सागरोपमः ।
रामरावणयोर्युद्धं रामरावणयोरिव॥ पृ. 198

71. रे रे रावण हीन-दीन कुमते रामोऽपि किं मानुषः ।
किं गंगापि नदी गजः सुरगजोच्चर्य श्रवा किं हयः ॥
किं रम्भात्यबला कृतं किमु युगं कामोऽपि धन्वी न किं
त्रैलोक्यप्रकट प्रताप विभवः किं रे हनुमान कपिः ॥ पृ. 215

72. सुवर्णस्य सुवर्णस्य सुवर्णस्य च मैथिली
प्रेषितं रामचन्द्रेण सुवर्णस्यांगुलीयकम् ॥ पृ. 219

73. आद्यं दीर्घत्रयं प्राह द्वितीयं ह्रस्वमेव च।
विन्दुर्विन्दु त्रयेणापि हनुमान सार्धविन्दुना ॥ पृ. 224

74. आंजनेयमतिपाटलाननं कांचनाद्रि कमनीय विग्रहं
पारिजात तरू मूलवासिनं भावयामि पवमाननन्दनम् ॥ पृ. 288

75. यत्र यत्र रघुनाथकीर्तनं तत्र तत्र कृतमस्तकांजलिम् ।
वाष्पवारिपरिपूर्णलोचनं मारुति नमतराक्षसान्तकम् ॥ पृ. 352

76. यत्र योगेश्वरो कृष्णः यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीविजयोभूतिध्रुवः नीमिर्मतिर्मम ॥ पृ. 360

प्रथम पुरुष

77. आगच्छ शयने साध्वि कुरु वृक्षः स्थलेहिमाम् ।
स्वयमे शोभास्वरूपाऽसि देहस्य भूषणं यथा॥
कृष्णं वदन्ति मां लोकास्त्वमव रहितं यदा।
श्रीकृष्णं च तदा ते पिऽत्वेयव सहितं परम् ॥ पृ. 8

पुरुषोत्तम

78. अन्धः तमः प्रविशन्ति ये अविद्यां उपासते । पृ. 107

78. या देवि सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमोनमः ॥
या देवि सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमोनमः ॥

या देवि सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमोनमः ।।
या देवि सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमोनमः ।। पृ. 181

79. सूच्यग्रं न दातव्यं विना युद्धेन केशव। पृ. 229

80. काम एष क्रोध एष रजोगुण समुद्भवः । पृ. 297

81. क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा । पृ. 307

82. यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम । पृ. 355

83. या निशा सर्वभूतानां तस्या जागर्ति संयमी । पृ. 462

बंगाली उद्धरण

डॉ. मिश्र के उपन्यासों में प्रायः रवीन्द्रनाथ ठाकुर के उद्धरण पाए जाते हैं। यथा-

सूरज के आने तक

1. होबे, होबे प्रभात होबे,
आंधार जाबे केटे,
तोमार वाणी सोनार धारा,
पोड़वे आकाश फेटे। पृ. 14

2. आजि ए प्रभाते रविर कर,
केमोने पाशिलो प्राणेर पर,
केमोने पोशिलो गुहार आधारे
प्रभात पाखीर गान।
ना जानी, कैनो रे एतो दीन परे
जागिया उठिलो प्रान....। पृ. 22

लक्ष्मण रेखा

3. ओरे आज कि गान गेयछे पाखी,
एसे छे रविर कर? पृ. 27

पवनपुत्र

4. कतो नव जगतेर कुसुम-कानन,

कतो नवआकाशेर चादेर आलोक
कतो दिवसेर तुमि विरहेर व्यथा
कतो रजनौर तुमि प्रणयेर लाज। पृ. 34

का के लागूं पांव

5. आमार सोनार बांगला,
आमि तोमाय भालोबासी
भालोबासी तोमाय आमि। पृ. 35.

शान्तिदूत

6. यदि तोर डाक सुने
केऊ न आसे
तोबे एकला चलो
एकला चलो, एकला चलो रे। पृ. 169

मैथिली के उद्धरण

नदी नहीं मुड़ती :

1. शिव हो उतरब पार कवन विधि। पृ. 100

पीतांबरा :

2. विहरई नवल किशोर।
कालिन्दी पुलिन कुंजवन शोभन, नव-नव प्रेमविभोर।
नवल रसाल मुकुल मधु मातल कोकिल कल गाय।
नव युवती गण उमता वह नव रस कानन धाय।
नव युराज नवल नव नागरि मिल दे नव नव भांति।
नित-नित सेंसन नव नव लेखन विद्यापति मति भांति। पृ. 117

3. लोचन घायल पे घायल हरि नहिं आयल रे।
शिव शिव जिवओं न जाय, आकरों अरूक्षायल रे।
मनकर तो हो उड़ि जाई जओं हरि पाउय रे।
प्रेम परसयानि जान आन डर लाइए रे।।
रो मोर विधि विराअेल निन्दओ हेरायल रे।

मनाहि विद्यापति गाओल धनि धैरज कह रे।
आचिरे मिलत तो हि बालम प्ररत मनोरथ रे। पृ. 118

4. माधव कि कहब सुन्दर रूपे।
कतेक जतन विहि आनि समारल देखलि नयन स्वरूपे।।
पल्लवराज चरण युग शोभित गति गजराजक माने।
कनक केदलि पर सिंह समारल तापर मेरू समाने।।
मेरू उपर दुई कमल फुलायल नाल बिना रूचि पाई।
मणिमय हार धार बहु सुरसरि तंई नहिं कमल सुखाई।
अधर बिम्ब सन दशन दाड़िम बिजु रवि शशि उगथिक पोसे।
राहु दूर बस नियरी न आवथि तंई नहिं करथि गरासे।।
सारंग नयन वचन पुनि सारंग सारंग तनु समधाने।
सारंग ऊपर दश सारंग केलि करथि मधुपाने।।
भनहु विद्यापति सुनु वर जोवति एहन जगत नहिं आने।
राजा शिवसिंह रूप नारायन लखिया देइ पति भाने।। पृ. 134

गुजराती के उद्धरण

पवनपुत्र

1. जुद्धे चढ्या पंचवदन, कोप्या क्रोध आणी मन,
करमां ग्रह्यु शूल पिनाक, करी गर्जना मारी हाक।
मस्तक जटाजूट सघन, गजनुं चर्म ओढ्युं तन,
धरी स्मशान विभूत अंग, शोभे अलंकार भुजंग।
राजे अर्धचंद्र ललाट, क्रोधे करे भस्म स्वराट,
उपवीत सर्पनुं जगदीश, वहेती गंग निर्मल शीश।
दीठा सर्व जन परतक्ष, आनन पंच ने त्रिचक्ष,
कंठे रूंढ केरी माल, करमां ग्रह्युं ब्रह्म कपाल।
माथे सेन महा विकराल, भैरव भूत ने वैताल,

बाजे डाक डमरू, शंख, शिंगी, पणव गोमुख डंख
करवा भक्त केरी सहाय, युद्धे चढ्या शंकर राय,
पोते विराज्या रथमांहे, आव्या रामसेना ज्यां हे।
एवुं जोई शिवनुं रूप, कंपी सकल सेना भूप,
करी गर्जना घोर प्रचंड, व्याप्यो शब्द सकल ब्रह्मांड।
ध्रूजी धरा सलक्यो शेष, पर्वत सिंधु सरित अशेष,
डोल्या देव दस दिग्पाल, जाणो हवे प्रल्ले काल।
मूक्यां शिवे बाण अपार, गण सहु करे मारो मार,
एवो थयो महासंग्राम, नाठा जोध मूकी माम।
पूरवे त्रिपुर मर्दन ज्यम, व्याप्यो क्रोध शिवने त्यम,
करवा मांड्युं जुद्ध महाघोर, पाडे चीस करता शोर।
कीधो सेनानो संहार, त्यारे केवो थयो हाहाकार
बोल्या शंभु क्रोधासक्त, क्या छे वीरमणि भुज भक्त। पृ. 334-335

2. जय हनुमंता महा बलवंता, नमो नमो तुजने,
पवनपुत्र प्रणतारति मोचन, धन्य महाभुजने।
अंजनीनंदन सूरज शिष्य, महामति फाल्गुनातुलजाता,
सीताशोकहारण भयवारण, शरणागतत्राता।
श्री रामचंद्रना परम प्रिय छो, अनन्या दास कहावो
कपिवंशना जीवन महाजन, मन करूणा लावो।
लंकादहन गहन गुण गंभीर, क्षय अक्षय करता।
निशिचर विपिन अशोक शोकदा, अद्‌भुत कृत धरता। पृ. 336

हिन्दी के उद्धरण

डॉ. भगवतीशरण मिश्र के उपन्यासों में संस्कृत के उद्धरणों की तरह हिन्दी के उद्धरणों की भी बहुलता पाई जाती है। हिन्दी के उद्धरणों की बहुलता का एक कारण यह भी है कि डॉ. मिश्र ने 'पीतांबरा', 'देख कबीरा रोया', 'का के लागूं पांव' और 'गोबिन्द गाथा' जैसे जिन ऐतिहासिक चरित्रों को लेकर उपन्यासों की सृष्टि की है वे चरित्र स्वयं भी एक कवि है। अतः उनके जीवन-कवन के साथ उनकी काव्य-रचना

का आना स्वाभाविक ही माना जाएगा। यहाँ पर एक बात ध्यातव्य रहे कि हमने ब्रज एवं अवधि के उद्धरणों को हिन्दी के उद्धरण के अन्तर्गत रखा है। गुरु नानक, गुरु गोविन्दसिंह, कबीर, मीरा, तुलसी आदि की गणना हिन्दी साहित्य के अन्तर्गत होती है। गुरु नानक, गोविन्दसिंह, मीरा, सूरदास आदि के ब्रज भाषा के उद्धरण मिलते हैं तो तुलसीदास के अवधि भाषा के उद्धरण भी प्राप्त होते हैं। साथ ही हिन्दी के अन्य कवियों के उद्धरणों को भी हमने रेखांकित किया है। यहाँ पर हमने विभिन्न कवियों के उद्धरण प्रस्तुत किया है। यथा-

देख कबीरा रोया : कबीर :

'देख कबीरा रोया' उपन्यास निर्गुण संत काव्यधारा के फक्कड़ कवि कबीर के जीवन पर आधारित है। इस उपन्यास में लगभग ढाइसो दोहे और पद मिलते हैं। 'पीतांबरा' और 'एक और अहल्या' उपन्यासों में भी कबीर के कुछ दोहे मिल जाते हैं, किन्तु यहाँ पर हम 'देख कबीरा रोया' उपन्यास में से ही कुछ दोहे और पदों को रेखांकित कर रहे हैं। यथा-

1. हाड़ जरै ज्यों लाकड़ी, केस जरै ज्यों घास।
   सबका जलना देखकर, भये कबीर उदास। पृ. 26
2. लूटि सकै तो लूटि लै राम नाम कै लूटि।
   पीछे ही पछताहुगे, यहु तन जैहैं छुटि।। पृ. 27
3. धूत कहै, अवधूत कहै, रजपूत कहै, जुलहा कहै कोई।
   काहू की बेटी से बेटा न ब्याहौं, काहू की जात बिगार न सोई।।पृ. 35
4. वही महादेव, वही मुहम्मद, ब्रह्मा, आदम कहिए।
   कोई हिन्दू कोई तुरक कहावै, एक जमीं पर रहिए।
   बेद-किताब पढ़ै ते कुतवा, वे मौला वे पांडे।
   कह कबीर ते दोनों भूले, रामहुं किन्हुं न पाया।
   वे खसिया वे गाव कटावैं, वादे जनम गंवाया।। पृ. 41
5. लीके लीके गाड़ी चले, लीके चलै कपूत।
   लीक छोड़ तीनों चले, शायर, सिंह, सपूत। ७पृ. 46
6. प्रेम न बाड़ी उपजै प्रेम न हाट बिकाय।
   राजा परजा जेही रूचै शीश देई लेई जाय।। पृ. 54
7. मेरा मुझमें कुछ नहीं जो कुछ है सो तेरा।

तेरा तुझको अर्पण क्या लागे है मेरा। पृ. 56

8. कबीरा सूता क्या करै, जागिन जपौ मुरारि।
एक दिनां तो सोवणों, लंबे पांव पसारि॥ पृ. 62

9. खरी कसौटी राम की, खोटा टिके न कोय।
राम कसौटी सोटिके, जो जीवन मृतक होय॥ पृ. 69

10. पतिवरता पति को भजै, और न आन सुहाय।
सिंह बचा जो लंघना, तो भी घास न खाय। पृ. 71

11. दुलहिन गावहुं मंगलाचार
हम घरि आए हो राजा राम भरतार।
तन रत करि मैं मन रति करिहूं, पंचतत्त बाराती।
रामदेव मोरे पाहुनै, आवे मैं यौवन में माती॥
सरीर सरोवर बेदी करिहु, ब्रह्म वेद उचार।
रामदेव संग भांवरि लेहूं, धनि-धनि भाग हमार॥
सुर तैतीसूं कौटिक आए, मुनिवर सहस उनचासी।
कहै कबीर हम ब्याहि चले हैं, पुरुष एक अविनासी॥ पृ. 81

12. साई इतना दीजिए जामे कुटुम समाय।
मैं भी भूखा ना रहूं साधु न भूखा जाय॥ पृ. 83

13. मन ना रंगाए, रंगाए जोगी कपरा
आसन मार मंदिर में बैठे
नाम छांड़ि पूजन लगे पथरा।
कनवा फड़ाय जोगी जटवा बढ़ौले
दाढ़ी बढ़ाय जोगी है गेले बकरा॥
जंगल जाय जोगी धुनिया रमौले
काम जराय जोगी हो गैले हिजरा।
मथवा मुड़ाय जोगी कपड़ा रंगीले
गीता बांच के हौ गैले लबरा॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो
जम दरवजवा बांधीर चल पकरा॥ पृ. 94

14. कृष्ण करीमा एक है, नाम धराया दोय।
कहै कबीर दो नाम सुनि, भर्मि परो मति कोय।। पृ. 123

15. सतगुरु की महिमा अनंत, अनंत किया उपकार।
लोचन अनंत उघाड़िया, अनंत दिखावणहार।। पृ. 146

16. चाखा चाहे प्रेम रस, राखा चाहे मान।
एक म्यान में दो खड़ग, देखा सुना न कान।। पृ. 156

17. सिंहों के लेहड़े नहीं, हंसो की नहीं पांति।
हीरों की नहिं बोरियाँ, साधु न चले जमाति।। पृ. 181

18. कामी, क्रोधी,लालची, इनते भक्ति न होय।
भक्ति करै कोई सूरमा, जाति बरन कुल खोय। पृ. 371

19. कौन तुम्हारी जाति है, कौन तुम्हारा नांव?
कौन तुम्हारा इष्ट है, कौन तुम्हारा गाँव?
जाति हमारी आत्मा, प्राण हमारा नाम।
अलख हमारा इष्ट है, गगन हमारा ग्राम।। पृ. 205

20. कबिरा कूता राम का, मुतिया मेरा नाऊँ।
गलै राम की जेबड़ी, जित खिंचे तित जाऊँ।। पृ. 215

21. लाली मेरे लाल की, जित देखो तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल।। पृ. 224

22. नारी निरखि न देखिए, निरंखन न कीजै दौर।
देखत ही तो विष चढ़ै, मन आवे कछु और।। पृ. 262

23. ऐसी बानी बोलिए, मन का आपा खोय।
अपना मन सीतल करे, औरन को सुख होय।। पृ. 282

24. आया है सो जाएगा, राजा रंक फकीर।
एक सिंहासन चढि चलै, एक बंधे जजीर।। पृ. 324

25. पंडित पुस्तक बांधि के, दै सिरहाने सोय।
वह अक्षर इनमें नहीं, हंसि दे भावै रोय।। पृ. 326

26. कथनी थोथी जगत् में, करनी उत्तम सार।
कहै कबीर करनी भली, उतरे भव जल पार।। पृ. 328

27. ब्राह्मण ते गद्हा भला, आन देव ते कुत्ता।
मुल्ला ते मुरगा भला, शहर जगावै सुत्ता ॥ पृ. 339

28. काल करै सो आज कर, आज करै सो अब।
छिन में परलय होत है, बहुरि करोगे कब? पृ. 366

29. क्या काशी क्या मगहर ऊसर, जो पैं हृरदय बस मोरा।
जो काशी तन तजे कबीरा,राम ही कौन निहोरा। पृ. 390

पीतांबरा

'पीतांबरा' भक्त कवयित्री मीरा बाई के जीवन को लेकर लिखा गया उपन्यास है। इस उपन्यास में मीराबाई द्वारा रचित लगभग पैंतालिस जितने भक्ति-पद आए हैं। इसके अलावा 'का के लागूं पां' में मीरा बाई का एकाद पद मिलता है। यहाँ पर प्रस्तुत उपन्यास में से कुछ पदों को उद्धृत किया जा रहा है जिसमें राजस्थानी और खड़ी बोली की छांट भी मिलती है। यथा-

30. आवत मोरी गलियन में गिरधारी।
मैं तो घुस गई लाज की मारी॥
कुसुमल पाग केसरिया जामा, ऊपर फूल हजारी।
मुकुट ऊपर छत्र विराजे, कुण्डल की छवि न्यारी।
केसरी चीर दरियाई को लेंगो ऊपर अंगिया भारी।
आवत देखी किसन मुरारी, छिप गई राधा प्यारी।
मोर मुकुट मनोहर लोहै नथली की छवि न्यारी।
गल मोतिन की माल विराजे, चरण कमल बलिहारी।
अभी राधा प्यारी अरज करत है सुन लो किसन मुरारी।
मीरा के प्रभु गिरधर नागर चरण कमल पर वारी॥ पृ. 159-160

31. माई री मैं तो लियो गोविन्दो मोल
कोई कहै छानै, कोई कहै चौडे
लियो री बजन्ता ढोल
कोई कहै मुंह धो
कोई कहै सुंह धो,

लियो री तराजू तोल।
कोई कहै कारो कोई कहै गोरो,
लिया री अमोलिक मोल
याही कूं सब जग जाणत है
लियो री आँखी खोल।
मीरां कूं प्रभु दरसण दीज्यो
पूरब जन को कोल। पृ. 207

32. मनै चाकर राखौ जी,
मनै चाकर राखौ जी।
चाकर रहश्यूं बाग लगाश्यूं,
नित उठ दरशण पाश्यूं।
वृन्दावन की कुंज गलिन में
तेरी लीला गाश्यूं॥ पृ. 242

33. मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई॥
जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई॥
छाड़ि दई कुल की कानि कहा करि है कोई॥
समैं सन्तन ढिंग बैठि-बैठि लोक-लाज खोई।
अंसुवन जल सींचि-सींचि प्रेम-बेलि बोई।
अब तो बेल फैल गई, आणन्द फल होई॥
भगत देख राजी हुई जगत देख रोई॥
दासी 'मीरा' लाल गिरधर तारो अब मोही॥ पृ. 351

34. श्री गिरधर आगे नाचूंगी।
नाची नाची पिव रसिक रिझाऊँ
प्रेम जन को नाचूंगी।
प्रेम प्रीत की बांधि घुंघरू
सूरत की कछनी काछूंगी॥
श्री गिरधर आगे नाचूंगी।
लोक लाज कुल की मर्यादा

यह मैं एक न राखूंगी॥
पिय के पलंग पर जा पोढूंगी,
मीरा हरि रंग राचूंगी।
श्री गिरधर आगे नाचूंगी॥ पृ. 364

35. पद घुंघरयां पांचा की
लोग कह्यो मीरा बावरी, सासु कहे कुलनासी री।
विख रो प्याला राणा भेज्यां पीवां मीरां हांसी री।
तण-मण वार्यों हरि चरणामो दरसण अमरित प्यासी री।
मीरां रे प्रभु गिरधर नागर, थारो सरणां आस्यां री। पृ. 602

36. अजामील अपराधी तारे, तारे नीच सुदान।
जल डूबत गजराज उबारे, गणिका चढ़ी विमान।
और अधम तारे बहुतेरे भाखत सन्त सुजान।
कुब्जा नीच भीलणी तारी जाणे सकल जहान।
कह लग कहूं गिणत नहीं आवे थकि रहे वेद पुरान।
मीरा दासी सरण तिहारी, सुनिये दोनो कान॥
जाऊं ना ससुरिए, जाऊं ना पीहरिए
हरि सूं नैह लगाती।
दासी मीरा के प्रभु गिरधर
मैं चरणन की दासी। पृ. 625

डॉ. मिश्र के 'का के लागूं पांव' और 'गोबिन्द गाथा' क्रमश- गुरु तेगबहादूर और गुरु गोविंदसिंह के जीवन-कवन पर आधारित उपन्यास हैं। इन उपन्यासों में गुरु नानक और गुरु गोविन्दसिंह की रचनाओं के चालीस जितने उद्धरण हमें प्राप्त होते हैं। गुरु गोविन्दसिंह ने उस समय की साहित्यिक भाषा ब्रज भाषा में रचना की। जबकि गुरु नानक रचनाओं में पूर्वी पंजाबी और पश्चिमी पंजाबी का पुट अधिक मिलता है। यहाँ पर प्रथम गुरु नानक और बाद में गुरु गोविन्दसिंह के कुछ पदों को संगृहीत किया गया है। यथा-

का के लागूं पांवः गुरु नानक

37. खुरपासान, खसमाना कीआ हिन्दुस्तान उराया।
आप दोस न देई करता जय किर मुगल पड़ाया।
एती मार पई कुर लाणे तैं की दरद न आया। पृ. 19

38. आखणि जोरु, चुपै नह जोरु,
जोरु न मंगणि देणि न जोरु,
जोरु न जीवणि मरणि नह जोरु
जोरु न राजि न मालि मति जोरु
जोरु न सुरति गिआन बिचहि
जोरु न जुगती छुटै संसारु
जिसु हाथ जोरु करि वेखै सोई
नानक उत्तमु नीचु न कोई। पृ. 254

39. इक ओंकार सतिनाम
करता पुरखू निरभउ निरवैर
अकाल मूरति अजूनि सैभं गुरु प्रसादि
आदि सचु जगादि सचु
है भी सचु नानक भी सचु।। पृ. 387

गोबिन्द गाथाः गुरु नानक

40. आदि पुरखु कऊ अलह कहिए,
संख भई बारी।
देवल देवतियां करू लागा
ऐसी कीरति चाली।
कूजा,बांग, निमाज मसल्ला
नील रूप बनवारी।
घरि-घरि मी आं सभना जीआं
बोली अवर तुमारी। पृ. 49

41. ओंकार, सतिनाम, कर्ता-परख, निरभउ, निखैरू,
अकाल मूरति, अजूनी, सैभं, गुरु प्रसादि। पृ. 94

का के लागूं पांव : गुरु गोविन्दसिंह

42. राज साज हम बर जब आयो।
जथा सकत तब धरम चलायो।
भांति-भांति बन खेल शिकार।
मारे रीछ रोझ झंकार। पृ. 439

43. साधन हेतु इन जिनि करी।
सीस दिया पर सी न उचारी॥
धर्म हेतु साका जिनि किया।
सीस दिया पर सिरूर न दिया॥ पृ. 486

गोबिन्द गाथाः गुरु गोविन्दसिंह

44. जो हमको परमेसर उचारे हैं।
ते सब नरक-कुंड महि परि हैं॥ पृ. 69

45. हम इह काज जगत मो आए,
धर्म हेत गुरु देव पठाए।
जहां-तहां तुम धर्म विचारो,
दुष्ट देखियत पकरि पछारो॥
यही काज धरा हम जनमं
समझि लेहु साधु सब सनमं
धरम चलावन, संत उबारन,
दूसट सभन को मूल उपारन॥ पृ. 81

46. भेड़ों को मैं शेर बनाऊं ।
राउन के संग रंक लड़ाऊं।
भूप गरिबन को कह वाऊं ।
चिड़ियों से मैं बाज तुड़ाऊं ।
सवा लाख से एक लडाऊं।
तबै गोबिन्दसिंह नाम कहाऊं। पृ. 83

47. बैठि रह्यो बक ध्यान लगायो।

न्हात फिरयो लिए सात् समुद्रन ।
लोक गयो परलोक गवायो।
वास कियो बिखियान सो बैठके।
ऐसे ही ऐस सु बैंस बितायो,
साचु कहौं सुन लेहु सभै
जिन प्रेम किया तिनही प्रभु पायो। पृ. 89

48. नमो सूरज सूरजै, नमो चंद्र चंद्रे।
नमो राज राजे, नमो इंद्र इंद्रे ॥
नमो अंधकारे, नमो तेज तेजे ।
नमो बिंद बिंद्रे, नमो बीज बीजे॥ पृ. 96

49. देहि शिवा वर मोहि इहै
शुभ कर्मन से कभौं न टरौं
न डरौं अरि सों जब जाई लरौं,
निश्चय कर अपनी जीत करौं॥ पृ. 109

50. तब भई देव बानी बनाई।
जिन करयो दूर दुख दशरथ राई॥
तब धाम होंगे विसुन।
सब काज आज सिव हो हिं जिसुन॥ पृ. 111

51. नमसकार श्री खड्ग को, करौं सुहितु चिंतुलाई।
पूरन करौ गिरंथ इहु तुम मुहि करह सहाइ॥ पृ. 168

52. भद्र देश हमको लै आये।
भांति-भांति दाईअन दुलराये॥
जब हम धरम करम को आए।
दैव लोक तब पिना सिधाए। पृ. 173

53. इन पुत्रन के शीश पर वार दिए सुत चार।
चार गए तो क्या हुआ जीवित चार हजार॥ पृ. 311

पीतांबरा : सूरदास

54. मैया मोरी मैं नहीं माखन खायों
ग्वाल बाल सखा मिली सब
मेरे मुख लपटायो। पृ. 115

55. मइया कबहीं बढ़ेगी चोटी
कति दिवस मोंहे दूध
पिवत् भयो, यह अब हूँ
छोटी की छोटी। पृ. 115

56. मइया मौहं दाऊ बहुत खिझायो
मों सो कहत मोल को लीनो
तुम यशोमति कब जायो।
तुम यशोमति कब जायो। पृ. 116

का के लागूं पांवः सूरदास

57. हाथ छुड़ाए जात हो निबल जानि के मोहि।
मन से यदि जाओगे, तो सबल बखानौ तोहि।। पृ. 94

देख कबीरा रोयाः सूरदास

58. मेरौ मन अनत कहाँ सुख पावै।
जैसे उड़ि जहाज को पंछी पुनि जहाज पै आवै।। पृ. 191

59. सूरदास प्रभु कामधेनु तज, छेरी कौन दुहाए? पृ. 347

डॉ. मिश्र के अनेक उपन्यासों में तुलसीदास के उद्धरण पाए जाते हैं। जैसे- 'पीतांबरा', 'पहला सूरज', 'देख कबीरा रोया', 'का के लागूं पांव', 'गोबिन्द गाथा', 'शान्ति दूत', 'पवनपुत्र', 'सूरज के आने तक' और 'बंधक आत्माएँ'। किन्तु यहाँ पर कुछ ही उपन्यासों से उद्धरण प्रस्तुत कर रहे हैं। यथा-

पीतांबरा

60. सब उपमा कवि रहे जुठारी।
केहि पट तरौं विदेह कुमारी॥ पृ. 78

61. जाके प्रिय न राम वैदेही
तजिए ताहि कोटि वैरी सम यद्यपि परम सनेही।
तज्यो पिता प्रहलाद विभीषण बन्धु भरत महतारी।
बलि गुरु तज्यो कन्त वृज वनितनि भे सब मंगलकारी।
नाता नेह राम सौं मनियते सहृदय सुसेव्य जहाँ लौं।
अंजन कहाँ आँख जो फूटे, बहुत कहीं कहाँ लौं।
तुलसी सौं सब भांति परमहित पूज्य प्राण ते प्यारो।
जासो होय सनेह राम ते ऐसी मतो हमारो। पृ. 590

देख कबीरा रोया

62. साधु चरित सुभ चरित कपासू, नीरस विशद गुण-मय फल जासू।
जे सहि दु:ख पर छिद्र दुरावा, बंदनीय जेहि जग जस पावा॥ पृ. 34

63. भाव, कुभाव, अनख आलस हूँ।
राम जपत मंगल दिशि दसहूँ। पृ. 36

64. राम भगत हित नर तनु धारी।
सहि संकट किए साधु सुखारी॥
नाम सप्रेम जपत अनयासा।
भगत होहिं मुद मंगल वासा॥ पृ. 37

65. राम एक तापस तिय तारी।
नाम कोटि खल कुमति सुधारी॥ पृ. 37

का के लागूं पांव

66. भये प्रकट किरपाला, दीन दयाला कौसल्या हितकारी।
हर्षित महतारी मुनिमन हारी, अद्‌भूत रूप विचारी।
लोचन अभिरामा तनु घन स्यामा, शोभा-सिंधु खरारि॥ पृ. 111

67. नौमी तिथि मधुमास पुनीता।
सकल पच्छ अभिजीत हरिप्रीता॥ पृ. 112

68. जाकि रही भावना जैसी, हरि मूरत देखी तिन तैसी। पृ. 169

पवनपुत्र

69. गुरु गृह गए पढ़न रघुराई।
अल्प काल विद्या सब पाई॥ पृ. 32

70. पुनि प्रभु गए सरोवर तीरा।
पम्पा नाग सुभग गम्भीरा।
संत हृदय जस निर्मल बारी।
बांके घाट मनोहर चारी॥
जहं-तहं पियहिं विविध मृग नीरा।
जनु उदार गृह जाचक भीरा॥ पृ. 46

71. जो जनतेउ वन बन्धु विछोहू,
पिता वचन मनतेउ नहिं ओहू। पृ. 62

72. अनुज बधू भगिनी सुत नारी।
सुनु सठ कन्या सम ए चारी॥
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई।
ताहि बधें कछु पाप न होइ॥ पृ. 75

73. बूंद अघात सहहिं गिरि कैसे।
खेल के बचन संत सहँ जैसे॥ पृ. 90

74. सब उपमा कवि रहे जुठारी।
केहि पटतरौ विदेहकुमारी॥ पृ. 133

75. प्रभु पलाप सुनि कान
बिकल भए बानर निकर।
आइ गयउ हनुमान
जिमि करूणा महँ बीर रस॥ पृ. 172

76. एहिं तन राम भगति मैं पाई।

तातें मोहि ममता अधिकाई।
जेहि तें कछु निज स्वारथ होई।
तेहि पर ममता करे सब कोई॥ पृ. 214

77. मृद मंगलमय संत समाजू।
जिमि जग जंगम तीरथराजू
मज्जन फल पेखिय तत्काला।
काक होहिं पिक बकउ मराला॥ पृ. 309

78. मति कीरति गति भूति भलाई।
जो जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई॥
सो जानब सत्संग प्रभाऊ।
लोकहुं वेद न उपाऊँ॥ पृ. 310

बंधक आत्माएँ

79. सिधि सब सिय आयसु
अकनि गईं जहाँ जनवास।
लिए सम्पदा सकल सुख
सुरपुर भोग विलास। पृ. 145

80. विभव भेद कछु कोउ न जाना।
सकल जनक कर करहिं बखाना॥
सिय महिमा रघुनायक जानी।
हरषे हृदयं हेतु पहचानी॥ पृ. 145

81. मुनिहि सोच पाहुन बड़ नेवता।
तसि पूजा-चाहिअ जस देवता॥
सुनि रिधि सिधि अनिमादिक आईं
आयसु होइ सो करहिं गोसाईं॥ पृ. 148

82. रिधि रिधि सिर धरि मुनिवर बानी।
बड़भागिनी आपुहि अनुमानी॥
कहहिं परसपर सिधि समुदाई।

अतुलित अतिथि राम लघु भाई।
मुनि पद बंदि करिअ सोइ आजू।
होई सुखी सब राज समाजू।।
अस कहि रचेउ रूचिर गृह नाना।
जोहि बिलोकि बिलखाहिं विमाना।। पृ. 149

डॉ. मिश्र के उपन्यासों में उपर्युक्त कवियों के अलावा अन्य कवियों के उद्धरण भी प्राप्त होते हैं जिनको हम नीचे उद्धृत कर रहे हैं। यथा-

गोबिन्द गाथा

83. गुरु को लवपुर बसो महाना।
जहि कहि ले बैठे धनवाना।
मोर बाजार बिखे बट्ट होई।
व्याह प्रतीखत भे सब कोई।।
नर-नारिन के अति चित चाऊ।
पिखिन बारात नरनि समदाऊ।
कह्यों न जाई कट बहु तैयारी ।
भयै बास यही आनन्द भारी।। पृ. 55 (संतोषसिंह)

84. बादित बाज उठे तत्काल।
कहि मुख बात न देत सुहाई। पृ. 57 (संतोषसिंह)

85. धन्य गुरु गोबिन्द सिंह,
आपे गुरु आपे चेला। पृ. 184

का के लागूं पांव

86. वेदना विकल फिर आई मेरी चौदहों भुवन में
सुख कहीं न दिया दिखाई विश्राम कहाँ जीवन में ? पृ. 195

87. मेरो मन और कहाँ रम पाए?
हरि जी, यह सुन्दरता नयनों में छा जाए।
कानों में यह मधुर कथा-रस भर-भर कर ललचाए।

सुन्दर नाम प्रभो मेरे मुख निस्सृत हो नित भाए।
जहाँ भी पहुँची अपनी आँखें, तव दरसन ही पाएँ।
मैं हूँ, भक्त तुम्हारा प्रभुजी, तेरे प्रेम पगाए।
मेरे तप-योग साधन का फल बन तू आ जाए।
सूरज वंश पयोधि-सुधाकर बार-बार हम गाए। पृ. 274

पीतांबरा

88. बोल कृष्ण, कृष्ण बोल, कृष्ण-कृष्ण बोल-बोल। पृ 226

89. हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण-कृष्ण हरे-हरे। पृ. 393

90. वृन्दावन की कुंज गलिन का भेद न जाने कोय।
डाल-डाल और पात-पात से राधे-राधे होय। पृ. 607

91. श्रीकृष्ण गोविन्द हरे मुरारे, हे नाथ नारायण वासुदेव। पृ. 544

पवनपुत्र

92. काज के पन्नो की तुलसी,
तुलसी-दल जैसा बना गया। पृ.260 (विश्वनाथ प्रसाद)

देख कबीरा रोया

93. चौदह सो पचपन साल गए, चंद्रवार एक ठाट भए। (धरमदास)
जेठ सुदी बरसायत को पूरनमासी परगट भए॥
घन गरजै दामिनी दमके, बूंदे बरसैं झर लाग गए।
लहर तालाब में कमल खिले, तहं कबीर भानु परगट हुए॥ पृ. 31

94. तोरे भरोसे मगहर बसिओ, मेरे तन की तपन बुझाई।
पहले दरसन मगहर पायो, पुनि कासी बसे आई॥
(इस उपन्यास में लेखक ने यह पद कबीर का नहीं बताया है।)

शान्तिदूत

95. हिमगिरि के उत्तुंग शिकर पर बैठ शिला की शीतल छांह (जयशंकर प्रसाद)
एक पुरुष भीगें नयनों से देख रहा था प्रलय प्रवाह। पृ. 192

लक्ष्मणरेखा

96. घिर रहे थे घुँघराले बाल। (जयशंकर प्रसाद)
अंश अवलंबित मुख के पास॥
नव घन-शावक से सुकुमार।
सुधा भरने को विधु के पास॥ पृ. 35

प्रथम पुरुष

97. नन्द को आनन्द भयो
जय कन्हैया लाल की।
लड़कन को हाथी घोड़ा,
बुढ़वन को पालकी।
नन्द को आनन्द भयो,
जय कन्हैया लाल की॥ पृ. 39-40

अंग्रेजी के उद्धरण

सूरज के आने तक

1. व्हेन गोड इज़ विद अस, हू कैन बी अगेंस्ट अस। पृ. 61
2. पोयेट्री इज़ दी स्पार्टेनियस ओवरफ्लो ऑफ पावरफुल फीलींग्स। पृ. 74
3. फेथ विदाउट एक्शन इज़ डेड
4. फारगेट सेवेन्टी सेवन टाइम्स सेवन। पृ. 127
5. फेथ इज़ ब्लाइंड। पृ. 83

नदी नहीं मुड़ती

6. एक्सेप्शन प्रूव्स दी रूल। पृ. 83
7. ग्रेट मेन थिंक एलाइक। पृ. 64
8. काज़ एण्ड इफेक्ट रिलेशन। पृ. 122
9. देयर इज़ नथिंग लाइक समथिंग फॉर नथिंग। पृ. 122
10. नो रिऐक्शन विदाउट ऐक्शन। पृ. 122
11. गॉड मेक्स ए वे व्हेयर देयर इज़ नो वे। पृ. 122

एक और अहल्या

12. इट इज ओपेन्ड बिफोर योर नॉक। पृ. 127

13. सप्लाई प्रिसिड्स दी डिमान्ड। पृ. 127

14. आई हैज नॉट सीन, नॉर हैज़ इयर हॉर्ड,
नाइदर हैज़ इन्टर्ड इन टू दी हार्ट ऑफ मैन,
दी थिंग्स व्हिच गॉड हैज़
प्रिपेयर्ड फॉर देम हू लव हिम। पृ. 127-128

लक्ष्मण-रेखा

15. देअर इज़ नो कंपीटीशन ऐट दी टॉप। पृ. 53

16. मैन कांट लिव बाई ब्रेड एलोन। पृ. 111

बंधक आत्माएँ

17. देअर आर मेनी थींग्स इन दी अर्थ एंड हेवेन.... पृ. 100

गोबिन्द गाथा

18. व्हेयर टू ऑर थ्री गैदर इन माय नेम, आई ऐम देअर एमिडस्ट देम। पृ. 193

पीतांबरा

19. लाइफ इज नॉट ए बेड ऑफ रोजेज। पृ. 519

अनूदित उद्धरण

डॉ. भगवतीशरण मिश्र के उपन्यासों में विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों तथा विविध भाषाओं के कवियों के उद्धरण तो प्राप्त होते ही हैं, साथ ही विभिन्न ग्रन्थ-श्रीमद् भागवत, वाल्मीकि रामायण, महाभारत, रामचरित मानस, बाइबल कुरान, उपनिषदों में ईशावास्य, कठोपनिषद, पुराणों में मार्कण्डेयपुराण, रघुवंश, गीता - तथा दार्शनिकों और कवियों के अनूदित उद्धरण भी उपलब्ध होते हैं जिन्हें हम नीचे उद्धृत कर रहे हैं। यथा-

पवननपुत्र

1. क्योंकि ये पैरों के ऊपर के आभूषण हैं। कानों के कुंडल हैं, कलाइयों के कंगल हैं और हैं भुजाओं के केयूर। पैरों के नूपुर होते तो मैं उन्हें पहचान लेता। पर पैरों से ऊपर जब मेरी दृष्टि उठी ही नहीं तो।

   पृ. 67 : रामायण

2. मेरे आराध्य! आपगा आदेश स्वीकार्य है। जब तक इस विश्व में आपकी पवित्र गाथा गाई जाती रहेगी तब तक मैं आपकी आज्ञा के अनुपालन में यहाँ बना रहूँगा।

   पृ. 208 : रामायण

3. यह व्यक्ति वेदों और व्याकरण का भारी अध्येता प्रतीत होता है। इतनी देरके सम्भाषण के बावजूद इसके मुँह से एक शब्द भी गलत उच्चरित नहीं हुआ।

   पृ. 214 : रामायण

4. 'क्मिपुरुष' वर्ष में हनुमान किन्नरों और गन्धर्वों के साथ लक्ष्मण के अग्रज, आदि पुरुष राम के गुणों का गायन करते रहते हैं।

   पृ.221 : रामायण

5. अश्वत्यामा, बलि, व्यास, विभीषण, कृपाचार्य, परशुराम और हनुमान अमर हैं।

   पृ. 262

6. जीवन किसी सनकी द्वारा कही कोई कहानी है। पृ. 271

7. यदि तुम्हारे अन्दर अलसी के दाने के बराबर भी आस्था है तो तुम्हारे लिए कुछ भी असम्भव नहीं होगा। पृ. 272 बाइबल

8. कभी वे उसे स्वादिष्ट तृण की मुट्ठियाँ खिलाते कभी देह की खुजली दूर करते, कभी मच्छर-मक्खियों को उसके शरीर से भगाते, उसकी स्वेच्छापूर्ण गति में वे कोई बाधा नहीं बनते थे और वह जिधर जाना चाहती, उधर ही जाने देते।

   पृ. 318 रघुवंशम्

9. खटखटाओ नहीं कि ईश्वरीय द्वार खुल जाता है। पृ. 343 बाइबल

10. जो यहाँ है वह तो अन्यत्र मिल जाएगा पर जो यहाँ नहीं है वह कहीं और नहीं मिलेगा। पृ. 5. महाभारत।

पीतांबरा

11. 'लिली' पुष्प का क्षणिक जीवन 'ओक' के हजारों वर्षों के जीवन से कहीं अधिक सार्थक है। पृ. 80 (अंग्रेज कवि)।

12. ईश्वर जड़ और चेतन सभी में है। पृ. 86 (उपनिषद)

13. मनस्वी मनुष्य मान के लिए ही जीता है, मान के लिए ही मरता है। अवमानना का विष जीते जी कुछ ऐसे ही लोग पीते हैं जिनकी आत्मा मर चुकी है। पृ. 162

14. क्रोध, घृणा, वैमनस्य, ईर्ष्या, लोभ ये सब नरक के द्वार हैं। पृ. 493

15. धान के खेत में शस्य (धान) का पौधा पचता है, मरता है और पुनः अपने ही बीज से नए रूप में खड़ा हो आता है। पृ. 576 (कठोपनिषद)

पहला सूरज

16. योग और संन्यास में अन्तर बाल-बुद्धिवाले देखते हैं पंडित नहीं। पृ. 220 (गीता)

17. देवताओं के अनुग्रह से प्राप्त सुख-सम्पत्ति का जो बिना उनमें बाँटे ही उपयोग करता है वह चोर के सिवा और कुछ नहीं। पृ. 222 (गीता)

18. तप, पूजा-आराधना को तो किसी हालत में छोड़ना नहीं, ये तो हमारी शुद्धि के मार्ग हैं। पृ.223

19. वह भवानी-शक्ति, ईश्वरी शक्ति जिस पर अनुकूल होती है वह उसे विश्व-वन्द्य बनाकर ही छोड़ती है। पृ.227 : मार्कण्डेय पुराण।

20. अहंकार ने जिनके विवेक को मन्द कर दिया है, ऐसे मूढ़मति अपने को ही कर्ता मान बैठते हैं। पृ. 346

देख कबीरा रोया

21. उसे न हथियार काट सकते, न आग जलाकर खाक कर सकती, न पानी गला सकता, न वायु ही उसका बाल बांका कर सकती। पृ. 12 : गीता

22. रूहें शरीर छोड़ने के बाद पड़ी रहती हैं उस अंतिम दिन की प्रतीक्षा में जब खुदा सबकी करनी-धरनी का हिसाब लेगा। पृ. 12:कुरान

23. खुदा ऐसा खबर रखनेवाला और देखनेवाला है कि कोई चीज उससे छिपी नहीं,न जमीन में न आसमान में।   पृ. 16: सुरतु आलि इमरान

24. अनंत में ही सुख है, सीमित में नहीं।   पृ. 46 : उपनिषद

25. जिस रास्ते को बड़े लोग जाते हैं उसी राह दूसरे भी जाने लगते हैं।
पृ. 170

26. जो कुछ करते हो, जो कुछ खाते हो, जो कुछ जप-तप करते हो, जो कुछ दान-दक्षिणा करते हो उसे मुझे अर्पित कर दो। पृ. 176 : गीता

27. सोए रहना कलियुग है, बैठ जाना द्वापर, खड़े रहना और चलना सतयुग है।
पृ. 195

28. मन बहुत चंचल और अधिकार में आने योग्य नहीं है। फिर भी अभ्यास और वैराग्य द्वारा उसे नियंत्रित किया जा सकता है। पृ. 222 : गीता

29. चारों वर्ण मेरे ही द्वारा सृष्ट किए गए हैं किन्तु गुण और कर्म के आधार पर।
पृ. 237 : गीता

30. तुम लोग शौक से मांस खाओ पर अपने पेट को जानवरों का कब्रगाह नहीं बनाओ।   पृ. 275 : कुरान शरीफ

31. खुदा बंदों पर जुल्म नहीं करता।   पृ. 277 : कुरान शरीफ

32. जो हुक्म तुम्हारे परवरदिगार से तुम्हारे पास आता है उसी पर अमल करो। उसके अलावा कोई शक्तिशाली नहीं और तुम खुदा के विरुद्ध बोलनेवालों से अलग रहो। :   पृ. 280,281 : कुरान-शरीफ

33. जब संसार के सारे जीव सोते हैं तब साधक जागता रहता है। पृ. 300

34. जो उसके (खुदा के) हुक्म को नजरअंदाज करता है उसका पालन नहीं करता, वह उसका प्यारा नहीं है।   पृ. 280 : कुरान शरीफ

35. जहाँ नारियों का सम्मान होता है, उसकी पूजा होती है, वहाँ देवता निवास करते हैं।   पृ. 263

36. जिसने जन्म लिया है वह मरण को भी प्राप्त होगा और जिसकी मृत्यु होती है उसका जन्म भी अवश्यंभावी है।   पृ. 349

शान्तिदूत

37. जो अनन्य भाव से भगवान का हो जाता है उसके योगक्षेम का वहन वह स्वयं करता है।   पृ. 67-68 : गीता

38. कार्य में तुम्हारा अधिकार है, फल में नहीं. इसलिए कर्म-फल की चिन्ता किए बिना तू कर्म करता जा, अकर्मण्य कभी नहीं रहो। पृ. 70 : गीता

39. सच्चा धार्मिक वही हो जो पहले कर्म अथवा कर्ता है। जैसे आत्मा के बिना शरीर मृत है, उसी तरह कर्म के अभाव में धर्म का भी अस्तित्व नहीं है। पृ. 71 : बाइबल

40. हर जीव या वस्तु में ईश्वर का निवास है। पृ. 86 : ईशावास्य

41. व्यक्ति जैसे पुराने वस्त्र को त्याग कर नए वस्त्र धारण कर लेता है वैसे ही आत्मा, जीर्ण-शीर्ण शरीर को त्याग कर एक नया शरीर प्राप्त कर लेती है। पृ. 36

42. कोई तुम्हारे दाहिने गाल पर चांटा मारे तो बायां गाल भी उसके सामने कर दो। पृ. 58 : बाइबल

43. जब तलवार के सामने हो तो अखबार निकालो। पृ. 71

गोबिन्द गाथा:

44. सभी बड़े लोग समान रूप से सोचते हैं। पृ. 194

45. समरथ (समर्थ) को कोई दोष नहीं लगता। पृ. 202

नदी नहीं मुड़ती:

46. कहीं कामोपभोग से काम की पूर्ति हुई है। घी की आहुति पा आग और भड़कती है कि नहीं। पृ. 32 : महाभारतकार

47. कोई नहीं जानता है कि भगवान उसे कैसी बड़ी-से-बड़ी वस्तु देने को तैयार है जो उसके नियमों के अनुसार चलता है। पृ. 60 : अमरीकन पादरी

48. अगर कोई व्यक्ति यह जानता है कि उसके लिए क्या करना उचित है और तब भी वह उसे नहीं करता तो वही उसके लिए पाप है। पृ. 64 : न्यू टेस्टामेन्ट

लक्ष्मण रेखा:

49. मनुष्य अपने जीवनरूपी जलयान का स्वयं नियंत्रक है। पृ. 92 : पाश्चात्य चिन्तक

निष्कर्ष

अध्याय के समग्रावलोकन से हम निम्नलिखित निष्कर्षों तक पहुँच सकते हैं:

1. वाक्य के रचनानुसार, क्रियानुसार, अर्थ या भाव के आधार पर तथा शैली के आधार पर कई भेदोपभेद बनते हैं। डॉ. मिश्र के उपन्यासों में ये सभी प्रकार के वाक्य हमें उपलब्ध होते हैं। लेखक आलंकारिक शैली में अभ्यस्त है अतः उनके उपन्यासों में अनेक स्थानों पर वर्णमैत्री युक्त वाक्य भी मिलते हैं।
2. डॉ. मिश्र के उपन्यासों में प्रोक्तियाँ, मुहावरे, कहावतें आदि भी प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। कहीं-कहीं लेखक ने कहावत और मुहावरों का नवीन ढंग से भी प्रयोग किया है।
3. आलंकारिक शैली के कारण उनके उपन्यासों में उपमा, मालोपमा, मानवीकरण, उत्प्रेक्षा, सांगरूपक जैसे अलंकार भी मिलते हैं।
4. किसी अच्छे सिद्धहस्त लेखक के लेखन में सूक्तियों का अनायास आना एक स्वाभाविक लक्षमण माना जाएगा। डॉ. मिश्र के उपन्यासों में भी इस प्रकार की उक्तियाँ पुष्कल प्रमाण में मिलती हैं।
5. उपन्यास में पाए जाने वाले उद्धरणों से यह ज्ञापित होता है कि लेखक का पठन-पाठन कितना विस्तृत है। डॉ. मिश्र के उपन्यासों में संस्कृत, बंगाली, मैथिली, गुजराती, अंग्रेजी, व्रज, अवधि तथा हिन्दी के कई उद्धरण प्राप्त होते हैं। अनूदित उद्धरणों की बहुलता भी पाई जाती है।
6. इस प्रकार हम देख सकते हैं कि वाक्य विचार की दृष्टि से मिश्र जी की भाषा अत्यन्त समृद्ध, सम्पन्न और आलंकारिक पाई जाती है।

******

सन्दर्भानुक्रम

1. सरल भाषाविज्ञान : डॉ. अशोक शाह : पृ. 245।
2. वही : पृ. 245।
3. वही : पृ. 245।
4. वही : पृ. 245।
5. दृष्टव्य : पीतांबरा : पृ.सं. क्रमशः 396, 434, 452, 524 ।
6. दृष्टव्य : पहला सूरज : पृ.सं. क्रमशः 11, 15, 93, 46।
7. दृष्टव्य : देख कबीरा रोया : पृ.सं. क्रमशः207, 221, 222, 223।
8. दृष्टव्य : का के लागूं पांव : पृ.सं. क्रमशः 263, 270, 436।
9. दृष्टव्य :शान्तिदूत : पृ. 21।
10. दृष्टव्य : प्रथम पुरुष : पृ. 112।
11. दृष्टव्य : पुरुषोत्तम : पृ.सं. क्रमशः 159, 253।
12. दृष्टव्य : एक और अहल्या : पृ. 22।
13. देख कबीरा रोया : पृ. 25।
14. पवनपुत्र : पृ. 97।
15. गोबिन्द गाथा : पृ. 242।
16. पीतांबरा : पृ. 151-152।
17. पुरुषोत्तम : पृ. 205।
18. सूरज के आने तक : पृ. 20-21।
19. शान्तिदूत : पृ. 98।
20. एक और अहल्या : पृ. 207।
21. का के लागूं पांव : पृ. 49।
22. हिन्दी शब्द सागर : मूल संपादक : श्यामसुंदरदास : पृ. 3986।
23. दृष्टव्य : सूरज के आने तक : पृ.सं. क्रमशः 6, 6, 6, 6, 19, 6, 6, 7, 7, 7, 7, 7, 8, 8, 9, 10, 10, 13, 125, 14, 16, 19, 20, 20, 24, 28, 28, 30, 31, 31, 32, 32, 32, 34, 34, 34, 35, 38, 38, 39, 40, 41, 41, 41, 43, 43, 43, 43, 45, 45, 47, 48,

53, 53, 55, 55, 56, 61, 63, 68, 71, 74, 80, 81, 82, 82, 98, 101, 104, 106, 107, 132, 135, 140, 144, 144, 149, 153, 158

24. द्रष्टव्य : नदी नहीं मुड़ती : पृ.सं. क्रमशः 7, 7, 7, 8, 8, 9, 9, 9, 16, 17, 18, 21, 22, 23, 26, 27, 32, 32, 32, 33, 34, 34, 35, 40, 41, 43, 45, 45, 47, 51, 53, 61, 62, 63, 70, 72, 74, 76, 76, 86, 86, 90, 92, 94, 101, 107, 114, 122, 147, 151, 158, 180, 181, 108, 160

25. दृष्टव्य : एक और अहल्या : पृ.सं. क्रमशः 5, 13, 31, 33, 33, 33, 34, 36, 39, 43, 43, 43, 44, 45, 56, 58, 73, 75, 76, 83, 84, 84, 98, 121, 125, 129, 137, 143, 145, 162, 163, 173, 175, 181, 181, 181, 188, 189, 192, 198, 216, 220, 246

26. दृष्टव्य : लक्ष्मण-रेखा : पृ.सं. क्रमशः 9, 9, 16, 95, 73, 75, 97, 8, 9, 54, 94, 127, 149, 161, 175, 122, 124, 135, 145, 188

27. दृष्टव्य : पवनपुत्र : पृ.सं. क्रमशः 46, 10, 19, 24, 39, 50, 19, 38, 45, 51, 59, 72, 75, 77, 60, 62, 71, 94, 105, 113, 114, 127, 139, 140, 144, 149, 151, 184, 199, 165, 179, 226, 238, 269, 306, 271, 280, 292, 303, 310, 312, 313, 326, 355, 312

28. दृष्टव्य : प्रथम पुरुष : पृ.सं. क्रमशः 15, 39, 40, 46, 47, 51, 49, 50, 57, 63, 64, 81, 98, 107, 111, 112, 12, 117, 128, 129, 130, 136, 136, 140, 146, 158, 240, 244, 279, 259, 283, 307, 282, 316, 331, 333, 343

29. दृष्टव्य : पुरुषोत्तम : पृ.सं. क्रमशः 13, 13, 16, 18, 19, 38, 45, 52, 57, 91, 97, 104, 111, 118, 119, 120, 133, 134, 206, 255, 258, 431, 456, 478, 494

30. द्रष्टव्या : पीतांबरा : पृ.सं. क्रमशः 18, 18, 21, 26, 30, 31, 42, 55, 57, 63, 89, 91, 95, 101, 108, 108, 116, 128, 131, 136, 136, 139, 139, 141, 142, 142, 144, 146, 150, 167, 176, 194, 215, 238, 240, 264, 275, 271, 279, 280, 281, 282,

282, 338, 339, 366, 367, 368, 395, 402, 405, 421, 425, 425, 427, 466, 468, 469, 473, 496, 497, 499, 513, 536, 540, 542, 549, 555, 572, 594, 622

31. दृष्टव्य : पहला सूरज : पृ.सं. क्रमशः 17, 39, 41, 42, 42, 47, 47, 85, 112, 116, 126, 149, 150, 157, 177, 178, 182, 193, 193, 199, 230, 242, 244, 267, 269, 289, 304, 305, 347, 84

32. दृष्टव्य : देख कबीरा रोया : पृ.सं. क्रमशः 13, 13, 17, 18, 30, 33, 33, 38, 40, 46, 93, 105, 124, 180, 187, 188, 206, 220, 233, 257, 267, 273, 290, 292, 303, 303, 306, 123, 11, 14, 24, 34, 35, 43, 51, 62, 67, 76, 93, 105, 124, 125, 144, 155, 184, 243, 266, 345

33. दृष्टव्य : का के लागूं पांव : पृ.सं. क्रमशः 45, 81, 87, 108, 111, 135, 140, 152, 162, 170, 209, 214, 217, 228, 259, 297, 331, 342, 386, 441, 416, 419, 468, 441, 459, 460, 461, 470, 473, 475, 472, 19, 83

34. दृष्टव्य : गोबिन्द गाथा : पृ.सं. क्रमशः 14, 18, 23, 34, 40, 41, 51, 64, 66, 76, 100, 102, 103, 63, 64, 64, 103, 104, 126, 130, 113, 122, 124, 131, 138, 139, 141, 144, 146, 152, 146, 161, 163, 210, 215, 238, 238, 259, 266, 272, 293, 316, 318, 120, 139, 269, 323, 258

35. दृष्टव्य : शान्तिदूत : पृ.सं. क्रमशः 11, 17, 18, 19, 24, 25, 27, 28, 36, 54, 63, 73, 84, 88, 103, 116, 127, 133, 138, 170, 153, 154, 170, 175, 179, 191, 191, 193, 193, 73

36. आजीविका साधक हिन्दी : डॉ. पूरनचन्द्र टण्डन : पृ. 119

37. वही : पृ. 121

38. दृष्टव्य : सूरज के आने तक : पृ.सं. क्रमशः 7, 8, 8, 13, 13, 17, 18, 29, 7, 45, 53, 62, 73, 78, 137, 141, 82, 128, 15

39. दष्टव्य : नदी नहीं मुड़ती : पृ.सं. क्रमशः 11, 17, 17, 41, 54, 66, 67, 77, 89, 7, 134, 180

40. दृष्टव्य : एक और अहल्या : पृ.सं. क्रमशः 52, 101, 143, 166, 171, 185, 190, 193, 194, 204, 217, 219, 181

41. दृष्टव्य : लक्ष्मण-रेखा : पृ.सं. क्रमशः 98, 118, 140, 185

42. दृष्टव्य : पीतांबरा : पृ.सं. क्रमशः 37, 58, 111, 145, 157, 184, 240, 269, 279, 295, 399, 442, 469, 481, 493, 518, 465, 9, 587, 421,543

43. दृष्टव्य : पहला सूरज : पृ.सं. क्रमशः 42, 99, 109, 163, 175, 177, 178, 197, 287, 290

44. दृष्टव्य : देख कबीरा रोया : पृ.सं. क्रमशः 32, 107, 111, 128, 175, 304, 354, 24, 66, 156, 191, 298, 70।

45. दृष्टव्य : पृ.सं. क्रमशः 17, 36, 59, 126, 139, 169, 175, 181, 288, 364, 252

46. दृष्टव्य : गोबिन्द गाथा : पृ.सं. क्रमशः 67, 105, 128, 146, 191, 285, 38, 281, 283, 36

47. दृष्टव्य : शान्तिदूत : पृ.सं. क्रमशः 17, 23, 27, 52, 52, 63, 67, 55, 66

48. दृष्टव्य : पवनपुत्र : पृ.सं. क्रमशः 114, 121, 233

49. दृष्टव्य : प्रथम पुरुष : पृ. 313

50. दृष्टव्य : बंधक आत्माएँ : पृ. 39

51. दृष्टव्य : नदी नहीं मुड़ती : पृ.सं. क्रमशः 42, 158

52. दृष्टव्य : एक और अहल्या : पृ.सं. क्रमशः 44, 49, 148, 157, 228, 230

53. दृष्टव्य : लक्ष्मण-रेखा : पृ.सं. क्रमशः 84, 87, 127, 147, 56, 111

54. दृष्टव्य : पीतांबरा : पृ.सं. क्रमशः 48, 79, 80, 107, 133, 141, 518, 315, 333, 340, 386, 442, 446, 465, 495, 496, 541, 586, 597, 605, 465, 592

55. दृष्टव्य : पहला सूरज : पृ.सं. क्रमशः 266, 303

56. दृष्टव्य : देख कबीरा रोया : पृ.सं. क्रमशः 19, 23, 152, 160, 11, 19, 62, 274

57. दृष्टव्य : का के लागूं पांव : पृ.सं. क्रमशः 149, 217, 114
58. दृष्टव्य : गोबिन्द गाथा : पृ.सं. क्रमशः 126, 222, 204, 257, 271, 275, 297
59. दृष्टव्य : शान्तिदूत : पृ.सं. क्रमशः 62, 64, 40, 89
60. दृष्टव्य : पवनपुत्र : पृ.सं. क्रमशः 115, 239, 247, 143
61. दृष्टव्य : प्रथम पुरुष : पृ.सं. क्रमशः 21, 47, 47, 92, 164, 164, 198, 260, 343
62. दृष्टव्य : पुरुषोत्तम : पृ.सं. क्रमशः 221, 420, 464
63. दृष्टव्य : पीतांबरा : पृ.सं. क्रमशः 21, 25, 91, 95, 76, 129, 220, 396, 409, 432, 476, 520, 542, 561, 592
64. दृष्टव्य : पहला सूरज : पृ.सं. क्रमशः 193, 76, 134, 338
65. दृष्टव्य : देख कबीरा रोया : पृ.सं. क्रमशः 23, 75, 77, 244, 309, 309
66. दृष्टव्य : का के लागूं पांव : पृ.सं. क्रमशः 36, 38, 142, 206, 212, 250, 288
67. दृष्टव्य : गोबिन्द गाथा : पृ.सं. क्रमशः 9, 158, 298
68. दृष्टव्य : पवनपुत्र : पृ.सं. क्रमशः 134, 225, 272
69. दृष्टव्य : प्रथम पुरुष : पृ.सं. क्रमशः 46, 140, 187, 226, 268
70. दृष्टव्य : पुरुषोत्तम : पृ.सं. क्रमशः 14, 33, 50, 72, 119, 295, 235, 257, 281, 395
71. दृष्टव्य : सूरज के आने तक : पृ.सं. क्रमशः 96, 156, 166
72. दृष्टव्य : एक और अहल्या : पृ.सं. क्रमशः 125, 48
73. दृष्टव्य : प्रथम पुरुष : पृ 30
74. दृष्टव्य : वही : पृ. 205
75. दृष्टव्य : पीतांबरा : पृ. 353
76. दृष्टव्य : का के लागूं पांव : पृ.सं. क्रमशः 35, 453, 448
77. दृष्टव्य : गोबिन्द गाथा : पृ. 52
78. दृष्टव्य : शान्तिदूत : पृ.सं. क्रमशः 38, 55, 153, 156, 62
79. दृष्टव्य : पवनपुत्र : पृ.सं. क्रमशः 93, 126

80. दृष्टव्य : सूरज के आने तक : पृ.सं. क्रमशः 72, 111

81. दृष्टव्य : पीतांबरा : पृ.सं. क्रमशः 175, 250, 281, 291

82. दृष्टव्य : का के लागूं पांव : पृ.सं. क्रमशः 16, 34

83. दृष्टव्य : प्रथम पुरुष : पृ. 37

84. दृष्टव्य : पुरुषोत्तम : पृ.सं. क्रमशः 22, 477

85. दृष्टव्य : सूरज के आने तक : पृ.सं. क्रमशः 56, 150

86. दृष्टव्य : लक्ष्मण-रेखा : पृ. 99

87. दृष्टव्य : देख कबीरा रोया : पृ.सं. क्रमशः 28,135।

88. दृष्टव्य : सूरज के आने तक : पृ.सं. क्रमशः 18, 47, 85, 87, 88, 95, 104, 120, 121, 123, 133, 138, 153, 36

89. दृष्टव्य : नदी नहीं मुड़ती : पृ.सं. क्रमशः 58, 61, 63, 64, 72, 80, 107, 108, 122, 123, 127, 130, 175, 117

90. दृष्टव्य : एक और अहल्या : पृ.सं. क्रमशः 13, 13, 14, 45, 57, 71, 81, 90, 94, 99, 184, 231, 235, 222

91. दृष्टव्य : लक्ष्मण-रेखा : पृ.सं. क्रमशः 53, 54, 73, 92, 142

92. दृष्टव्य : पीतांबरा : पृ.सं. क्रमशः 22-23, 39, 43, 46, 77, 97, 148, 168, 169, 218, 223, 229, 257, 266, 294, 310, 350, 373, 392, 403, 457, 474, 475, 565, 612

93. दृष्टव्य : पहला सूरज : पृ.सं. क्रमशः 6, 55, 91, 97, 100, 122, 64, 129, 134, 152, 203, 220, 221, 225, 225, 263, 263, 264, 270, 346

94. दृष्टव्य : देख कबीरा रोया : पृ.सं. क्रमशः 85, 85, 55, 127, 128, 145, 170, 202, 215, 222, 228, 249, 308

95. दृष्टव्य : का के लागूं पांव : पृ.सं. क्रमशः 19, 237, 71, 78, 97, 142, 184, 195, 226, 245, 250, 226, 253, 271, 384, 428, 447, 256, 250, 252, 270, 294

96. दृष्टव्य : गोबिन्द गाथा : पृ.सं. क्रमशः 67, 74, 270, 32, 125, 161, 185, 298

97. दृष्टव्य : शान्तिदूत : पृ.सं. क्रमशः 12, 21, 29, 48, 48, 50, 61, 67,

67, 71, 73, 149, 164, 32

98. दृष्टव्य : पवनपुत्र : पृ.सं. क्रमशः 58, 79, 85, 126, 127, 146, 169, 169, 202, 203, 211, 272, 315, 343

99. दृष्टव्य : प्रथम पुरुष : पृ.सं. क्रमशः 46, 59, 70, 75, 77, 77, 95, 139, 147, 149, 150, 199, 255, 264, 308, 318, 351, 379

100. दृष्टव्य : पुरुषोत्तम : पृ.सं. क्रमशः 23, 31, 39, 43, 86, 89, 92, 94, 124, 131, 145, 200, 201, 210, 217, 235, 491

101. दृष्टव्य : बंधक आत्माएँ : पृ.सं. क्रमशः 6, 163, 164

******